महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६२ **अंक** : ०१
दयानन्दाब्दः १९५
विक्रम संवत्: पौष शुक्ल २०७६
कलि संवत्: ५१२०
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२०

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाषः ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-मन्त्री, परोपकारिणी सभा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क
भारत में
एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

i jki dkjh

जनवरी प्रथम २०२०

अनुक्रम

०१. कहाँ गये वे लोग?	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-४४	डॉ. धर्मवीर	०८
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	११
०४. अध्ययन और अध्यापन की...	स्वामी समर्पणानन्द	१६
०५. भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ	आचार्य नरदेव शास्त्री	२१
०६. गुरुकुल की ओर से	विकास आर्य	२४
०७. अल्लाह का नया फरिश्ता सुभाषिनी..	राजवीर आर्य	२७
०८. संस्था की ओर से...		३१
०९. वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

कहाँ गये वे लोग?

मोदी सरकार ने 'नागरिकता संशोधन बिल-२०१९' को लोकसभा और राज्यसभा में पास कराने में सफलता प्राप्त कर ली है। किन्तु इस घटनाक्रम ने हिन्दू एवं हिन्दुस्तान के अतीत, वर्तमान और भविष्य के बहुत-से रहस्यों से परदा उठाकर आशंकाओं के परिदृश्य को साफ कर दिया है। अनेक भयावह प्रश्न सामने आ गये हैं जिनके समाधान पर चिन्तन करना अपरिहार्य प्रतीत होता है। अनेक भ्रम दूर हो गये हैं। बिल पर हुई अप्रत्याशित प्रतिक्रियाओं ने अन्तर्निहित संभावित परिस्थितियों का आभास करा दिया है। हिन्दू-हिन्दुस्तान में अब भी यदि दूरदर्शितापूर्ण चेतना नहीं आती है, तो इनका रखवाला केवल भगवान् ही होगा। अपने भविष्य के सुपरिणाम-दुष्परिणाम की चिन्ता करना स्वयं का दायित्व होता है।

इस बिल का लक्ष्य केवल इतना ही है कि पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश के हिन्दू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी, ईसाई मतावलम्बी नागरिक जो ३१ दिसम्बर २०१४ तक भारत में आकर रह रहे हैं, जिन्हें अब तक अवैध प्रवासी माना जाता रहा है, इस बिल के कानून बनने के बाद वे भारत के वैध नागरिक मान्य होंगे। उन्हें व्यापार, नौकरी, नागरिकता आदि के वे सब अधिकार प्राप्त होंगे जो किसी भी भारतीय नागरिक को प्राप्त हैं। यह बिल कुछ समुदायों को अधिकार प्रदान कर रहा है, किसी समुदाय को उसके अधिकार से वंचित नहीं कर रहा है।

इस बिल पर सबसे तीव्र प्रतिक्रिया मुस्लिम समुदाय की सामने आई है। उसने यह अनुभव किया कि इसमें मुस्लिमों को सम्मिलित न करके हमारी उपेक्षा की है। बिल-विरोधी राजनीतिक और साम्प्रदादियक दलों ने मुस्लिमों में यह प्रचारित कर दिया कि यह बिल संविधान विरोधी है और मुस्लिमों के साथ अन्याय है। विस्मयजनक रूप से उन हिन्दुओं और हिन्दू दलों ने भी साथ दिया जो यह मान बैठे हैं कि धर्मनिरपेक्षता (सेक्युलरिज्म) के परित्राण के लिए ही उनका जन्म हुआ है और ईश्वर ने उन्हें संविधान की रक्षा का दायित्व देकर भारत में भेजा है। बिल के विरोध में हिंसक प्रदर्शन हुए, तोड़-फोड़ आगजनी हुई, सम्पत्तियों को नुकसान पहुँचाया गया। जबकि प्रदर्शनों से पूर्व विपक्ष और सरकार में तीखी बहस भी हो चुकी थी और सरकार ने स्पष्ट किया था कि बिल का उद्देश्य उक्त देशों में उक्त समुदायों के साथ हो रहे अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, बलात्कार, बलात् धर्मान्तरण, अपहरण से उनको बचाना है। फिर भी कुछ राजनीतिक दलों ने, जैसे-कांग्रेस, एनसीपी, बसपा, सपा, राजद, माकपा, टीएमसी, आप, टीआरएस, डीएमके, मुस्लिम लीग, ए आई एम आई एम (औवेसी) ने बिल के विरोध में मतदान किया। इसे विडम्बना ही कहेंगे कि बहुसंख्यक समुदाय पर आश्रित होते हुए भी इन दलों ने बहुसंख्यक समुदायों के हितों का साथ नहीं दिया। हिन्दू-हिन्दुस्तान के वर्तमान और भविष्य की यह एक यथार्थ झलक है। यदि यह वोट के लिए भी है तो दुर्भाग्य का संकेत है। स्वार्थ के लिए देश, समुदाय की घोर उपेक्षा है।

बिल के प्रारूप में मुस्लिम समुदाय का नाम क्यों नहीं आया, उसका कारण पूर्व पंक्तियों में बताया जा चुका है। उसके यथार्थ को समझने के लिए मुस्लिम देशों और इस्लाम के इतिहास पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। एक वास्तविक और भयावह चित्र उभरकर स्पष्ट हो जायेगा। इतिहास जानकारी देता है कि एशिया के ईरान, इराक, मिश्र, सीरिया, तुर्की, कजाखस्तान, किर्गिस्तान, ताजिकिस्तान, उज्बेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, मंगोलिया आदि अधिकांश देश तथा इंडोनेशिया, मलेशिया, मालदीव, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, पाकिस्तान आदि मूलतः आर्य (हिन्दू) धर्मावलम्बी थे। फिर ये बहुमतावलम्बी बने। धीरे-धीरे इनको मुस्लिम बना दिया गया। जो मुस्लिम नहीं बने, मूल धर्म के अनुयायी रहे, उनकी भूमि, घर-बार, धर्म-संस्कृति, अधिकार सब कुछ छिन गया और छिन रहा है। मानवाधिकार का रक्षक भी कोई नहीं बोला। जैसे दुनिया के बहुत-से समर्थक और कथित मानवाधिकारवादी लोग फिलिस्तीन के अधिकारों की पक्षधरता करते हैं वैसे वहाँ

के घर-अधिकारवंचित लोगों की बात कोई नहीं करता। यह उन लोगों की दोहरी मानसिकता की पोल खोल देने वाला व्यवहार है। प्रश्न उठता है कि इस्लाम-इतर धर्म-संस्कृति के वे हजारों-लाखों अनुयायी कहाँ गये और उनके साथ क्या व्यवहार हुआ? कोई नहीं बतलाता।

सन् १९४७ में भारत का धार्मिक आधार पर विभाजन तत्कालीन कांग्रेस ने स्वीकार किया। धर्म के नाम पर दो पक्ष थे- हिन्दू और मुसलमान। मुसलमानों को इस्लाम के आधार पर 'पाकिस्तान' देश मिल गया। दूसरा देश स्वत: हिन्दुओं का रह गया। इसको हिन्दू देश घोषित करना राजनीतिक और नैतिक दृष्टि से इसका अधिकार बनता था किन्तु इसको सेक्युलर (धर्मनिरपेक्ष) देश घोषित कर दिया। 'हिन्दुस्तान' हिन्दुओं का नहीं रहा और मुसलमान पृथक् स्वतन्त्र देश लेकर भी इस देश पर अधिकार ठोक रहे हैं। उनके भावी मंसूबे भी विस्तारवादी बने हुए हैं। कट्टरपन्थी और वामपन्थी इसको हिन्दुओं का देश स्वीकारने को तैयार नहीं है। ऐसे में प्रश्न और समस्या है कि हिन्दुओं का अपना कहने को कौनसा देश है? वे जायें तो कहाँ जायें? अब यह यक्ष-प्रश्न बन गया है। 'हिन्दू-देश' के अस्तित्व और भविष्य को अपनों ने ही मिटाया है। आज भी हिन्दू-हितों के विषयों, जैसे-राम मन्दिर निर्माण, कश्मीर से धारा ३७० हटाना, रोहिंग्या लोगों के अवैध प्रवेश को रोकना, नागरिकता बिल आदि पर वही दल आगे बढ़कर विरोध कर रहे हैं जो स्वयं को हिन्दुओं से सम्बद्ध घोषित करते हैं। क्या इसमें देश-समुदाय से बढ़कर निहित स्वार्थ ही है अथवा भूल और कोई गम्भीर अभिसन्धि? इस पर सबको चिन्तन करना चाहिये और हितकारी निर्णय लेना चाहिये। किन्हीं देशों में धर्म के आधार पर उत्पीड़ित हिन्दुओं को जब 'हिन्दुस्तान' में शरण और नागरिकता देने की बात आती है तो ये दल संविधान और धर्मनिरपेक्षता की दुहाई देकर विरोध में चिल्लाने लगते हैं किन्तु जब आतंकवादियों, घुसपैठियों, विद्रोहकारियों की बात आती है तो इनको साँप सूंघ जाता है। देश-हित और अपने समुदाय के भविष्य को सुरक्षित रखने का दायित्व इन्हीं राजनीतिक दलों का है। क्या ये दल उस दायित्व का निर्वाह ईमानदारी के साथ कर रहे हैं? इस विषय पर प्रत्येक हितधारी को दूरदर्शिता के आलोक में गम्भीरता से सोचना चाहिये।

जब कोई देश स्वतन्त्र अस्तित्व पाकर स्वायत्तशासी बनता है तो वह अन्तर-राष्ट्रीय व्यवस्थाओं, मर्यादाओं और नियमों के अधीन हो जाता है। अपने बहुसंख्यक नागरिकों के साथ अल्पसंख्यक वर्गों की सुरक्षा करना, उनके धार्मिक अधिकारों का संरक्षण करना, उनको संस्कृति-सभ्यता, परम्पराओं की स्वतन्त्रता देना, उनके साथ न्याय करना, अन्याय-अत्याचार से बचाना उसका संवैधानिक एवं राष्ट्रीय कर्त्तव्य हो जाता है। विभाजन के बाद भारत ने इन मर्यादाओं का निष्ठापूर्वक पालन किया, किन्तु पाकिस्तान बांग्लादेश, अफगानिस्तान में इन मर्यादाओं का पालन नहीं किया गया, अपितु विपरीत ही किया गया। इन देशों के पीड़ितों, हमारे सेना-अधिकारियों, संयुक्त राष्ट्रसंघ, स्वदेशी और विदेशी मीडिया, वहाँ से पलायन करने वाले नागरिकों की रिपोर्टों एवं आपबीती के अनुसार वहाँ घटित दिल दहला देनेवाली दास्तानों की लम्बी सूची है। विभाजन के समय वहाँ बसे रह गये अल्पसंख्यकों के साथ वहाँ प्रत्येक स्तर पर भेदभाव किया जाता है। उनकी उपेक्षा की जाती है। बलात् धर्मान्तरण किया जाता है। महिलाओं का अपहरण कर उनके साथ बलात्कार किया जाता है और उन्हें धर्मान्तरण करने तथा मुस्लिमों के साथ विवाह करने पर मजबूर किया जाता है। धर्मान्तरण न करने पर उन्हें तरह-तरह से प्रताड़ित किया जाता है। कई बार उनकी हत्या कर दी जाती है और उसको आत्महत्या दिखा दिया जाता है। प्रशासन और शासन उनकी सहायता करता है। अल्पसंख्यकों की सुनवाई नहीं होती। मुल्ला-मौलवी घोषणापूर्वक समूह में धर्मान्तरण करते हैं। मीडिया में उनका विवरण भी आता है किन्तु उन पर कोई कार्यवाही नहीं होती। अल्पसंख्यकों की भूमि, घर, सम्पत्ति पर बलात् कब्जा करके उन्हें भगा दिया जाता है। प्रशासन उनको वापिस दिलवाने में सहायता नहीं करता। कुछ रिपोर्टें तो यह जानकारी भी देती हैं कि दूरस्थ इलाकों में बसने वाले ग्रामीण हिन्दुओं को दबंग लोग उनके रहने के नाम पर टैक्स वसूलते हैं। स्वाभाविक न्याय का तर्क है कि सुखी व्यक्ति कहीं से पलायन नहीं करता, पीड़ित ही पलायन करता है। उक्त देशों से अपना घर-सम्पत्ति छोड़कर पलायन करके आये लोग सुख में

नहीं आये दु:ख के कारण आये हैं। सन् १९९० में भारत के ही राज्य कश्मीर से कई लाख पण्डितों को घर-भूमि, सम्पत्ति छीनकर कर रातों-रात कट्टरपन्थी मुसलमानों ने भगा दिया था, कितने ही लोगों का नरसंहार किया। संविधान तथा धर्मनिरपेक्षता का दम्भ भरने वाली तत्कालीन भारत की और कश्मीर की सरकार ने उनका कुछ नहीं बिगाड़ा और न उजड़े लोगों का आजतक पुनर्वास हुआ। पाठक कल्पना कर सकते हैं कि उन्हीं के धर्मप्रधान देश में उनका क्या बिगड़ सकता है? जिनका बिगड़ रहा है वे तो पलायन कर रहे हैं। वहाँ अल्पसंख्यक भय के वातावरण में जीवन जी रहे हैं। मुस्लिम नेता और दल इन मुद्दों पर कभी नहीं बोलते। उत्पीड़न के प्रमाण उन देशों में अल्पसंख्यकों की जनसंख्या के घटते आंकड़ें हैं।

भारत-विभाजन के बाद सन् १९५१ में हुई जनगणना के अनुसार पाकिस्तान में हिन्दुओं सहित अल्पसंख्यकों की जनसंख्या २३% थी, जो अब घटकर २% रह गई है। बांग्लादेश में २२.०५% थी, जो अब लगभग १०% है। अफगानिस्तान में अल्पसंख्यक ७.५ लाख के लगभग थे, जो अब १००० के आसपास बताये जाते हैं। इधर भारत में स्थिति यह है कि अल्पसंख्यक ९.८% थे, जो बढ़कर १४.२५ % हो गये और बहुसंख्यक हिन्दु आदि ८४% थे जो घटकर ७९% रह गये। उक्त तीनों देशों से ज्वलन्त प्रश्न है कि अल्पसंख्यक हजारों-लाखों की संख्या में कैसे घटे? उनके साथ क्या घटित हुआ? पलायन करके इतने सारे लोग भारत में तो आये नहीं। उनका क्या हुआ? आंकडों के साथ यह हिसाब उन देशों को दुनिया को देना चाहिए कि कहाँ गये वे लोग? विश्व के देशों को भी उक्त देशों से यह हिसाब माँगना चाहिए।

पाकिस्तान में अल्पसंख्यक हिन्दुओं के भयावह उत्पीड़न का दूसरा प्रमाण है- 'नेहरू-लियाकत अली समझौता।' विभाजन के समय भारत की ओर लौटते हिन्दुओं का पाकिस्तान में नरसंहार, बलात्कार, अपहरण, सम्पत्ति-हरण किया। बाद तक यह सिलसिला बन्द नहीं हुआ। इन अमानवीय घटनाओं से चिन्तित होकर पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री लियाकत अली खान और भारत के प्रधानमन्त्री के मध्य पाँच बातों पर समझौता हुआ- (१) दोनों देश अपने अल्पसंख्यकों की सुरक्षा करेंगे। दुर्व्यवहार नहीं होने देंगे। (२) शरणार्थियों को अपनी सम्पत्ति को निपटाने के लिए आने-जाने का अधिकार होगा। (३) बलात् धर्मान्तरण अवैध होगा। (४) अपहरण की गई महिलाओं को सम्पत्तिसहित नाते-रिश्तेदारों को सौंपा जायेगा। (५) दोनों देश अल्पसंख्यक आयोग गठित करेंगे। भारत ने इस समझौते का पालन किया किन्तु पाकिस्तान में यह 'कागजी समझौता' बनकर रह गया और अल्पसंख्यकों का उत्पीड़न पूर्ववत् जारी रहा। उक्त समझौते के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु तथा उत्पीड़न को रोकने के लिये वर्तमान नागरिकता बिल की परम आवश्यकता थी।

मुस्लिमों के साथ तथाकथित उदारवादी और वामपन्थी हिन्दू भी इस बिल पर प्रश्न करते हैं कि इसमें मुसलमानों को शामिल नहीं किया गया है। उनको शामिल करने का औचित्य ही नहीं है, क्योंकि उनके धर्म के तो वे अपने स्वतन्त्र स्वायत्तशासी देश हैं। वे उनके वैधानिक निवास हैं। जब उन्होंने धर्म के आधार पर उनको ले लिया है और अपने हिस्से की सभी सम्पत्तियाँ, भूक्षेत्र आदि ले चुके हैं तो उन्हें फिर से भारत में आने का अधिकार कैसे मिल सकता है? यदि उन्हें वहाँ कोई कष्ट है तो उसका उत्तरदायित्व उनके देशों का है और फिर ५५ मुस्लिम देश अन्य भी हैं, वे वहाँ क्यों न जायें? **यदि मुस्लिम समुदाय की इच्छा यह है कि बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान के मुसलमानों को भी भारत के नागरिक बनने का अधिकार दिया जाये, तो क्यों न भारत-विभाजन को रद्द करके फिर से तीनों देशों का एकीकरण कर अखण्ड भारत बना लिया जाये। नागरिकता की आपत्ति स्वत: दूर हो जायेगी।** इन देशों के नागरिक यदि भारत की नागरिकता ग्रहण करने के लिए उत्सुक हैं तो उसके दो ही निहितार्थ निकलते हैं, **एक**- उनके लिए भारत सुविधापूर्ण निरापद देश है। **दूसरा**- यहाँ आकर बसने से उनकी कोई गम्भीर भावी योजना क्रियान्वित हो सकती है।

विरोधियों में से कुछ लोग मानवता और मानवाधिकार की दुहाई दे रहे हैं। हिन्दू, पारसी, जैन, सिख समुदायों का कोई अपना स्वायत्तशासी घोषित देश नहीं है। जो कुछ है

वह हिन्दुस्तान ही है। कम-से-कम मानवता के नाते ही इस बिल को स्वीकार करें। नहीं तो मानवता उनका मात्र प्रपंच भर कहलायेगा। आश्चर्य की बात यह है कि बांग्लादेश, म्यांमार से करोड़ों मुसलमान भारत में अवैध प्रवेश करके रह रहे हैं। उनका आर्थिक भारत अधिकतर बहुसंख्यक सहन कर रहे हैं। जब उनको देश से बाहर निकालने की चर्चा आती है तो बिल-विरोधी लोग 'मानवता-मानवता' चिल्लाने लगते हैं। हिन्दू समुदायों के हित की बात जब आती है ते इसी मानवता को वे लोग भूल जाते हैं। सन् १९४७ में जब पाकिस्तान का निर्माण होना था तो मुस्लिम लीग और मुसलमानों को धर्मनिरपेक्षता याद नहीं आई और खुशी-खुशी इस्लामिक देश ले लिया। आज उन्हें धर्म निरपेक्षता की याद आ रही है। यही भेदभावपूर्ण दोहरी मानसिकता हिन्दू समुदायों के लिये भावी आशंका का कारण बन रही है। 'गजवा-ए-हिन्द' जैसे नारे इस आग में पैट्रोल का काम करते हैं।

हिन्दू समुदाय प्रकृति से सहिष्णु, निरापद और सह-अस्तित्व पर सहज आचरण करने वाला है। उसने कभी किसी देश पर आक्रमण कर कब्जा नहीं किया। कभी आतंकवाद, अपहरण, बलात् धर्मान्तरण, बलात्कार, नरसंहार जैसे कार्यों को उचित नहीं माना। विभिन्न देशों में उत्पीड़ित होकर उसने शान्तिपूर्ण जीवन के लिये हिन्दुस्तान को अपनी शरणस्थली बनाया। दूसरों को उत्पीड़ित करके कभी भगाया नहीं। किन्तु इतिहास बताता है कि इस्लाम में ये सामाजिक गुण नहीं हैं। उनके देशों से अल्पसंख्यकों को उत्पीड़ित होकर पलायन करने का इतिहास रहा है। सारी दुनिया में उनकी यह छवि बनी हुई है। उसके कारण उनके शान्तिमय सह-अस्तित्व पर इस्लाम-इतर देशों को तो भरोसा बनता ही नहीं, स्वयं मुसलमानों को भी नहीं है। यदि भरोसा होता तो ईरान, इराक, सीरिया, यमन, अफगानिस्तान, पाकिस्तान आदि मुस्लिम देशों में अपनों का ही भीषण नरसंहार नहीं होता। इस आशंकित भय से अपने नागरिकों की रक्षा करना प्रत्येक देश की सरकार का नैतिक दायित्व है। 'नागरिकता संशोधन बिल' उसी कर्त्तव्य-दिशा में मोदी सरकार का एक साहसिक कदम है।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

२६ व २७ फरवरी २०२०	–	परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस
१७ से २४ मई २०२०	–	आर्यवीर दल शिविर
३१ मई से ०७ जून २०२०	–	आर्यवीरांगना दल शिविर
१४ से २१ जून २०२०	–	योग साधना स्वाध्याय शिविर
०४ से ११ अक्टूबर २०२०	–	योग साधना स्वाध्याय शिविर
०६ अक्टूबर २०२०	–	डॉ. धर्मवीर स्मृति व्याख्यानमाला
२० से २२ नवम्बर २०२०	–	ऋषि मेला (१३७वाँ बलिदान समारोह)

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

आचार्य की आवश्यकता

यज्ञशाला गुरुकुल (बडौन्दा-बडौन्दी), लाड़वा इन्द्री रोड, कुरुक्षेत्र (हरियाणा) में एक योग्य आचार्य की आवश्यकता है जो कि गृहस्थी अथवा वानप्रस्थी व अनुभवी हो।

सम्पर्क- ९४६३१२२३३३, ८१९९८८५२२४

मृत्यु सूक्त-४४

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। -सम्पादक

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं विशन्तु।
आनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे।।

यह वेद ज्ञान की चर्चा का समय है। इस समय हम ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८ वें सूक्त पर विचार कर रहे हैं। हमारे विचार का केन्द्र इसका ७ वाँ मन्त्र है। इस मन्त्र का ऋषि यामायनः और इसका देवता पितृमेधः और इसका छन्द त्रिष्टुप है। इसकी सुन्दर शब्दावली वेद के द्वारा महिलाओं के प्रति दिये गये दृष्टिकोण का एक अच्छा उदाहरण है। हमने देखा था कि पूरे भारतीय साहित्य में यदि एकमात्र कोई साहित्य ऐसा है जिसमें कहीं भी महिला की निन्दा नहीं है, किसी तरह की आलोचना नहीं है, तो वह वेद का साहित्य है।

यहाँ पर महिला के लिए जिन शब्दों का उपयोग किया गया है- **इमा नारीरविधवाः सुपत्नीः**, संस्कृत में '**धव**' पुरुष को, पति को कहते हैं, और विधवा अर्थात् जिसका धव, पति चला गया हो, और हमारे वैदिक साहित्य में, नारी के लिए कहा '**अविधवा**'। अर्थात् वो कभी भी अधूरी, शोकयुक्त और असहाय नहीं रहेगी। जो लोग इस बात को समझते नहीं हैं वो शब्दों के अन्यथा अर्थ करके दूसरे अभिप्राय ले लेते हैं। यहाँ पर एक अच्छी, आदर्श, पत्नी का सम्पूर्ण रूप है। ऐसा नहीं है कि उनका कोई शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक स्तर या उनकी योग्यता या उनका सम्मान किसी तरह से कम हो। **आञ्जनेन सर्पिषा संविशन्तु**- कहता है जो अच्छी तरह से पवित्रीकरण है, शुद्धि, वो सदा पवित्र रहें, शुद्ध रहें, स्नात् रहें। **अनश्रवः अनमीवाः सुरत्ना**, ये तीन विशेषण बहुत हैं महिला के वैदिक स्वरूप को समझाने के लिए। पहला विशेषण है, '**अनश्रवः**' अर्थात् जिनकी आँखों में आँसू न हों। तो वेद कहता है कि घर की गृहिणी की आँखों में आँसू नहीं होने चाहिएँ। आँसू दुःख से होते हैं, शोक से होते हैं, तो हमारे पास ऐसा वातावरण होना चाहिए, ऐसा उसके लिए प्रयत्न होना चाहिए कि दुःख का, शोक का वातावरण न बने, किसी कारण से बने तो जल्दी समाप्त हो जाए, उसके लिए हम प्रयत्न करें।

इसके बाद कहता है, '**अनमीवा**' अनमीवा कहते हैं रोग या रोग के कारण। अर्थात् शारीरिक दृष्टि से भी उनका आहार-विहार इतना अच्छा हो कि उनके अन्दर रोगनिरोधक क्षमता हो, वे स्वस्थ हों। शारीरिक दृष्टि से उनको कोई कष्ट, दुःख, पीड़ा न हो। **सुरत्ना**- और अलंकृत हो। **सुरत्ना**- जो रमणीयता के साधन हैं, सुन्दरता के साधन हैं वे उनके पास हों। फिर कहा, **आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे**- यहाँ कहा हम घर में उनको आगे रखें। घर में मार्गदर्शक रखें, अच्छा बनाकर रखें।

आप वेद के शब्दों को जब देखेंगे, जहाँ-जहाँ भी महिला के सम्बन्ध में वेद के मन्त्रों में चर्चा आयी है, वहाँ उसको सदा ही आदर्श और उत्कृष्ट रूप दिया गया है। यदि हम इसी १० वें मण्डल के १५९ वें सूत्र की चर्चा करें जो लगभग अन्तिम सूक्तों में है, उसमें ६ मन्त्र हैं और पूरा का पूरा सूक्त महिला के लिए है। उसके देवता का नाम 'शचि-पोलोमी' है और उसका ऋषि भी 'शचि-पोलोमी' है। अर्थात् उसका कथन करने वाली भी ऋषिका है, महिला है और उसका विषय अर्थात् मन्त्रों में जो बात प्रतिपादित की गयी है वह भी महिला के सम्बन्ध में है, महिला के द्वारा है। तो महिला के द्वारा महिला के सम्बन्ध में उसके

अपने रूप के बारे में क्या कहा गया है यदि आप उन मन्त्रों के शब्दों को देखेंगे तो यह बात बहुत स्पष्ट हो जाएगी कि महिलाओं के बारे में वेद का स्वस्थ, अच्छा और आदर्श दृष्टिकोण है।

उदसौ सूर्यो अगादुदयं मामको भगः- मन्त्र की पहली पंक्ति है- जब किसी नये दिन का सूरज उगता है, तो एक महिला कहती है कि यह जो सूर्य उग रहा है, यह केवल सूर्य नहीं है। **अयम् मामको भगः** -यह मेरे ऐश्वर्य का, मेरी उन्नति का, मेरे उत्कर्ष का, सौभाग्य का उदय है। अर्थात् हर सूर्योदय के साथ, महिला के अन्दर एक नया उत्साह, उन्नति की ओर बढ़ने की चाह और प्रसन्नता का उदय है। यह उपमा दी गयी है, जब किसी बात को हम समझाना चाहते हैं तो संसार की किसी प्रचलित, परिचित, प्रसिद्ध वस्तु के द्वारा हम अपने अभिप्राय को व्यक्त करते हैं। इस मन्त्र में बताया गया, **मामको भगः**। जो मेरा ऐश्वर्य है, जो मेरा सौभाग्य है, जो मेरी उन्नति का शिखर है, वह कैसा है- **उदसौ सूर्यो अगाद्**। जैसे सूर्य यहाँ उदय हो रहा है वैसे ही मेरा सौभाग्य भी प्रतिदिन सूर्य की तरह उदित होता है। मन्त्र की अगली पंक्ति है, **अहं तद्विद्वला पतिमभ्यसाक्षि विषासहिः**। अब यह सौभाग्य है कहाँ से? आपको एक शब्द का प्रयोग अच्छा पता है कि कोई महिला जब विवाह करती है तो विवाह के बाद वह अपने को कहती है, मैं 'सौभाग्यवती' हूँ। अर्थात् मेरा सौभाग्य मेरे पास है और वह सौभाग्य किसी व्यक्ति का नाम नहीं है। संस्कृत में सौभाग्य का जो मूल शब्द **भग** है उसके छः अर्थ हैं-**ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञान वैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा।** भग शब्द ऐश्वर्य का वाचक है, धर्म का वाचक है, यश का, श्री अर्थात् सम्पत्ति का वाचक है, ज्ञान का वाचक है, वैराग्य का वाचक है। अर्थात् सौभाग्य शब्द हमें कुछ कह रहा है। वह कह रहा है कि यह व्यक्ति मेरे सौभाग्य का कारण है, ऐश्वर्य का कारण है, मेरी उन्नति का कारण है। तो जो प्रतिदिन मेरे सौभाग्य का उदय हो रहा है उसमें यह व्यक्ति, परिवार के सदस्य मेरे सहायक हैं। वह कहती है, **अहं तद्विद्वला पतिम्**, मैंने ऐसे पति को प्राप्त कर लिया है जो मेरे सौभाग्य का कारण है, सहायक है। **अभ्यसाक्षि विषासहिः**। वो कहती है उसके जो गुण हैं, सामर्थ्य है, उसकी जो अपेक्षायें हैं उसको मैं समझती हूँ। मैं उनको पूरा कर सकती हूँ, मैं उनको सहन कर सकती हूँ, मैं उसके साथ रह सकती हूँ तो इस तरह से मन्त्र जो बात कह रहा है कि यहाँ जो प्राथमिकता है वह स्त्री की है। स्त्री एक मुखिया बनकर, एक श्रेष्ठ नेत्री बनकर इन शब्दों का प्रयोग कर रही है। मन्त्र कहता है कि मैंने उसको प्राप्त किया है और प्राप्त ऐसे को किया जो सम्पूर्ण सामर्थ्ययुक्त है और जिसके सामर्थ्य को मैं निर्देशित, संचालित कर सकती हूँ।

इसलिये यहाँ पर मन्त्र के शब्द हैं-

इमा नारीरविधवाः सुपत्नी राञ्जनेन सर्पिषा संविशन्तु,

इमा नारीरविधवाः सुरत्ना- वे कभी भी दुःखी न हों, उनके मन को चोट पहुँचाने वाली बात न की जाए, जानबूझ कर तो बिल्कुल न की जाए। **अनमीवाः**, उनका किसी प्रकार का शोषण न किया जाए। अब ये तीनों के तीनों विशेषण यदि हम मध्यकाल की दृष्टि से देखें तो बहुत ही विचारणीय और चिन्तनीय हो जाते हैं। हमारे यहाँ मध्यकाल में आप देखेंगे तो एक हीनता का, निर्बलता का, पिछड़ेपन का, याचनावाला भाव स्त्री के साथ देखने में आता है। लेकिन वेद ऐसी शब्दावली काम में नहीं लेता। वेद तो कह रहा है, **अनश्रवः, अनमीवाः, सुरत्नाः** अर्थात् उनके अन्दर 'हृदय में' भावनाओं में, कहीं दुःख का निवास नहीं है। मन में कोई बात चोट पहुँचाने वाली नहीं है। ऐसा नहीं है कि उनके ऊपर कोई प्रतिबन्ध हो, या उनको कोई उपेक्षित करता हो।

मध्यकाल में हमारे साथ ऐसा हुआ, होता रहा है, अभी भी होता है। जिनको लगता है कि हमारे घर में लड़की नहीं होनी चाहिये, उनका व्यवहार, उनका विचार, आज भी वैसा ही है। यह बदलता है हमारे विचारों के, सोच के बदलने से। इसलिये यहाँ मन्त्र में जो शब्द हैं- अनश्रवः अनमीवाः सुरत्नाः। **अनश्रवः** हमारी मानसिक, वैचारिक स्थिति को बता रहा है। **अनमीवाः**-व्यवहारिक पक्ष को, भोजन है, छादन है, वस्त्र है, वस्तु है, यह उनके लिए विशेष है, अच्छा है और **सुरत्नाः**, अलंकरण है, शोभा के कारण है, चाहे वस्त्र हैं, चाहे अभ्यंग है, वस्तुएँ हैं, आभूषण, गहने हैं। कहता है कि उनका सम्पूर्ण विकास,

जो उनके जीवन की सम्पूर्णता है वह अनश्रव: अनमीवा: और सुरत्ना: है और उसके साथ-साथ कहा **आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे- वे आगे चलें, अगला कदम उनका हो, पहला कदम उनका हो। वे इस घर में अग्रणी बनकर स्थापित हों। जनय:** विशेषण स्त्रियों के लिए आया है। **योनिम्** कहते हैं, घर, स्थान, मूल। **अग्रे** अर्थात् आगे। तो अर्थ हुआ कि **नारियाँ हमारे घरों में आगे रहें।**

मन्त्र की इतनी सुन्दर शब्दावली रहते हुए भी हमारे यहाँ जो इसका अनुचित गलत अर्थ लिया जाता रहा वह इसी कारण रहा कि हमारे लोगों ने कभी वेद के मन्त्रों को सीधे-सीधे पढ़ा नहीं, लोगों को बताया नहीं। वेद के नाम पर तो हमने बहुत कुछ सुना किन्तु स्वयं वेद का कभी साक्षात् नहीं किया। वेद की जो शब्दावली है, उसका जो उपदेश है उससे हमने कभी समाज के लोगों को परिचित नहीं कराया।

इस दृष्टि से यदि हम इन शब्दों पर विचार करेंगे तो आज की हमारी जो परिस्थिति बनी हुई है इस परिस्थिति का निराकरण बड़े सहज भाव से हो सकता है। हम अपनी गलतियों का अनुभव कर सकते हैं और इनको दूर करने का यत्न भी कर सकते हैं। क्योंकि इनके बिना समाज का, परिवार का सुधार नहीं होता है। परिवार में यदि एक भी व्यक्ति अनपढ़ है, दु:खी है, रोगी है, असभ्य है, असंस्कृत है तो हमारा सम्पूर्ण वातावरण उससे प्रभावित होता है, पीड़ित होता है, उसके लिए चिन्तित होता है। इसलिए यह कहना कि कोई कम अच्छा है, या उसे कम अच्छा बनाना, रखना है, ऐसा नियम नहीं है। ऐसा कथन वेद का नहीं है। हम कहते हैं वेद मनुष्य के लिए परमेश्वर का उपदेश है तो उसमें किसी भी प्रकार का पक्षपात नहीं हो सकता, त्रुटि नहीं हो सकती तो यह पक्षपात और त्रुटिरहित जो कथन है, वह यह है कि इस समाज में जो उत्कृष्ट होना चाहिए, जो श्रेष्ठ होना चाहिए उसे श्रेष्ठ रखने का, बनाने का जो उत्तरदायित्व है वह उत्तरदायित्व इस समाज में पुरुष का है और उसके द्वारा महिलाएँ श्रेष्ठ रहें, स्वस्थ रहें, ऐसा वातावरण देना चाहिये, यह मन्त्र का अभिप्राय है।

[illegible]

पुस्तक का नाम	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
अष्टाध्यायी भाष्य (तीनों भाग)	५००	३५०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	८००	५००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	५००	२५०
पण्डित आत्माराम अमृतसरी	१००	७०
महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ	१५०	१००
व्यवहारभानु:	२५	२०
महर्षि दयानन्द की आत्मकथा	३०	२०
वेद पथ के पथिक	२००	१००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	२००	१००
स्तुतामया वरदा वेदमाता	१००	७०

पुस्तकें हेतु सम्पर्क करें:-

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाताधारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्रीयुत ज्वलन्तजी का पठनीय लेख- आर्यजगत् साप्ताहिक में माननीय डॉ. ज्वलन्तजी का काशी-शास्त्रार्थ पर लेख सुरुचि से पढ़ा। काशी-शास्त्रार्थ शताब्दी का प्रचार तो स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी ने बहुत किया, परन्तु आर्यसामाजिक पत्रों में इस विषय पर जो लेख छपे उसमें आर्यसमाज की प्रतिष्ठा के अनुरूप केवल एक ही लेख पढ़ने को मिला और वह था डॉ. ज्वलन्त जी का लेख। विद्वान् लेखक से ऐसी ही आशा थी। आपने बहुत परिश्रम करके यह ठोस व पठनीय लेख लिखा। अधिकांश लेखकों ने तो बस निब ही घिसाई। लेखों को पढ़कर घोर निराशा हुई। जो बन्धु प्रायः पत्रों में अपना लेख लिखकर प्रतिलिपि करवाकर कई पत्रों को लेख भेजते रहते हैं उन सज्जनों ने तो इतना भी कष्ट नहीं किया कि यह पता लगायें कि इस ऐतिहासिक घटना पर देश-विदेश में अब तक बड़े-बड़े विद्वान् लेखकों ने क्या-क्या लिखा है। आर्यसमाज लेखक अपने श्रम तथा साहित्य-साधना के लिये कभी बेजोड़ माने जाते थे। अब तो पत्रों पर विंहगम दृष्टि डालो तो घोर निराशा होती है।

भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार ईश्वरीप्रसाद का काशी-शास्त्रार्थ पर लेख 'नवयुग की आहट' में हमने उद्धृत किया है। मूल लेख जिस पत्रिका में छपा था वह फ़ाइल परोपकारिणी सभा को भेंट कर दी। किसी ने उस धारदार लेख का लाभ न उठाया। 'इतिहास बोल पड़ा' पुस्तक में अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड के तत्कालीन अंकों के लेखों को खोजकर पहली बार इस पुस्तक में उद्धृत किया गया। इनको हमारे लेखकों ने पढ़ा ही नहीं तो लाभ क्या पहुँचाते? एक पश्चिमी पत्रकार ने तब लिखा था कि काशी में मन्दिरों के भगवानों का अवमूल्यन हो गया है। स्वामी दयानन्द के सामने वेद से मूर्तिपूजा का प्रमाण देकर देश भर का कोई विद्वान् आने का साहस नहीं जुटा पाया। सम्पूर्ण जीवन-चरित्र ग्रन्थ में इस विषय पर सर्वाधिक नई खोज करके दी गई है। घनश्याम गोस्वामीजी की कोटि के काशी से पाण्डित्य प्राप्त विद्वान् के सामने पं. बालशास्त्री ने महर्षि की दिग्विजय के सम्बन्ध में क्या कहा? हमारे इन लम्बे-लम्बे लेख लिखने वालों को अब तक पता नहीं चला। ज्वलन्तजी से नये-नये लेखक कुछ सीखेंगे तो यश पायेंगे और आर्यसमाज का गौरव भी बढ़ेगा।

ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ- कई सभा संस्थायें यह शास्त्रार्थ संग्रह छपवाती रहती हैं। एक बार मान्य धर्मवीर जी ने इन्हें छापने की व्यवस्था की तो आपको रमेश जी ने सूचित किया कि इसमें तो भयानक अशुद्धियाँ हैं। सम्पादक महानुभावों ने टिप्पणियाँ तो बहुत दी हैं, परन्तु विधर्मियों विरोधियों के धर्मग्रन्थों तथा विद्वानों के नाम तक इनके द्वारा सम्पादित संग्रह में अशुद्ध छप रहे हैं। धर्मवीर जी ने जब इस विनीत से इस विषय में बात की तो तत्काल प्रकाशन रोककर अगली व्यवस्था का निर्णय किया। जिन्होंने परकीय मतों के उत्तर-प्रत्युत्तर में कुछ लिखा-पढ़ा ही नहीं वे सम्पादक बन जाते हैं। यह दुःखद स्थिति है। अब भी गड़बड़युक्त ये शास्त्रार्थ संग्रह छप रहे हैं। जालन्धर में ऋषि के साथ शास्त्रार्थ करने वाले मौलवी का नाम अशुद्ध छापा जा रहा है। अमृतसर के एक शास्त्रार्थ में एक पादरी का पं. लेखराम जी ने जो नाम दिया वह शुद्ध था। हमारे अंग्रेजी जानने वाले खोजियों ने शुद्ध को अशुद्ध करके पं. लेखराम जी पर धौंस जमा दी है।

उस पादरी को इस विनीत ने भी कुछ पढ़ा है। इस्लामी साहित्य में, मिर्जाई साहित्य में और कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर में उसकी पर्याप्त चर्चा है। आर्यसमाज को उपहास का विषय न बनाया जावें। विधर्मी पता लगने पर आर्यसमाज की निन्दा में कोई कमी नहीं छोड़ेंगे। मानाकि आप रिसर्चस्कॉलर होंगे, परन्तु पं. लेखरामजी, पं. चमूपतिजी और पूज्य उपाध्यायजी के सामने आप अभी बौने हैं। आर्यसमाज पर दया करो। हमारा मन ऐसे खोजियों, टिप्पणीकारों ने आहत कर दिया है।

स्वामी श्रद्धानन्द का नाम शुद्ध ही रहने दो- पुराने संन्यासियों में पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, स्वामी रुद्रानन्द, स्वामी श्री अभेदानन्द नाम के साथ सरस्वती

नहीं लिखा करते थे। स्वामी श्रद्धानन्द 'संन्यासी' शब्द तो साथ जोड़ा करते थे। लौहपुरुष ग्रन्थ के प्रथम संस्करण में न जाने प्रेस में मुखपृष्ठ पर कैसे स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के नाम के साथ भी सरस्वती जोड़ दिया जो अगले संस्करणों में शुद्ध कर दिया गया। इन दिनों स्वामी श्रद्धानन्द जी पर छपे लेखों में नाम के साथ सरस्वती जोड़ने वालों ने चूक की है। इसे इतिहास-प्रदूषण ही माना जावेगा। तथ्यों का मिलान करके लिखने का अभ्यास बनाया जावेगा तो लेखकों का सम्मान बढ़ेगा। समाज की शोभा होगी।

ऋषि जी ने नाई को पाँच रुपये दिलवाये थे- आर्यजगत् के दिसम्बर के प्रथम सप्ताह के पृष्ठ चार पर स्वर्गीय भारतीय जी ने ऋषिजी द्वारा देहत्याग की वेला में नाई को पाँच रुपये दिलवाये, इस तथ्य की पुष्टि में एक लम्बा लेख दिया है। उन्होंने ऐसा लिखकर एक प्रशंसा योग्य कार्य किया है। आप ही ने कभी इस घटना को झुठलाते हुए 'दयानन्द सन्देश' में एक लेख दिया था। तब लाला जीवनदासजी आदि कई पुराने आर्यपुरुषों के प्रमाण देकर इस तथ्य की पुष्टि के लिये लेख दिया था। हमने तब कई पुस्तकों के प्रमाण दिये थे।

श्री भारतीयजी ने लिखा है कि यह घटना हरविलास शारदाजी के जीवन-चरित्र में छपी मिलती है। विचारशील पाठक नोट कर लें कि **देवेन्द्र बाबूजी के ग्रन्थ के छपने से बहुत पहले यह ऋषि जी के अब तक के सबसे बड़े जीवन-चरित्र में श्रद्धेय पं. लक्ष्मणजी आर्योपदेशक ने यह घटना दे रखी है।** तत्कालीन एक पुराने पत्र में भी इसे हमने पढ़ा है। लाला जीवनदासजी के लेखों में भी छपती रही। लाला जीवनदासजी के लेख के साथ ही और भी कई पुराने आर्यपुरुषों के लेखों में यह घटना मिलती है। किसी भी ग्रन्थ में किसी महापुरुष की सब घटनायें कोई भी लेखक नहीं दे सकता। पं. लेखराम जी के कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर में ऋषि-जीवन की ऐसी कई घटनायें सप्रमाण दी गई हैं जो पण्डित जी ऋषि-जीवन में न दे सके। ग्रन्थ के आकार को देखकर ही लेखक को सामग्री देनी होती है।

इसके साथ ही लेखक, गवेषक यह नोट कर लें कि पं. लक्ष्मणजी का जन्म ऋषि के जीवनकाल में हुआ था। ऋषि ने उनके जन्मस्थान के पास दो नगरों की यात्रा करके वहाँ आर्यसमाजें भी स्थापित कीं। पं. लक्ष्मणजी ने वहाँ ऋषि के सम्पर्क में आये अनेक व्यक्तियों से ऋषि-जीवन की अनेक घटनायें लीं। आपके ग्रन्थ का आधार पं. लेखरामजी रचित जीवन-चरित्र तो था ही, परन्तु आपने ऋषि-जीवन की सामग्री की खोज में स्वयं भी बहुत श्रम किया था। **उनका ग्रन्थ उर्दू में होने से उर्दू न जाननेवाले इससे लाभान्वित न हो सके।** पूज्य पण्डित युधिष्ठिरजी मीमांसक की प्रेरणा से हमने इसका अनुवाद तो किया ही इसके साथ कई नये परिशिष्ट जोड़कर पर्याप्त नई व खोजपूर्ण सामग्री जोड़ दी। इस ग्रन्थरत्न में अब पर्याप्त ऐसी सामग्री है जो ऋषि के और किसी जीवन-चरित्र में नहीं दी जा सकी। अत: केवल पं. लेखरामजी तथा श्री देवेन्द्रबाबूजी के ग्रन्थों तक ही रुक जाना ठीक नहीं है। यह अज्ञता दोष है।

अविद्या को उखाड़ा जावे- कर्नाटक के एक मन्दिर में पाषाण-मूर्ति के दर्शन करने जब भक्तजन जाने लगे तो दलित वर्ग में जन्मा एक भक्त भी भीतर जाने लगा तो उसे मन्दिर के बाहर ही रोक दिया गया। आज भी उस **भक्त की मूर्ति मन्दिर के द्वार पर देखी जा सकती है।** हिन्दू समाज के अस्पृश्यता के महारोग के कलङ्क का स्मरण करवाने वाली यह मूर्ति तथा मन्दिर हमने भी देख रखा है।

भगवान् अपने भक्त को दर्शन देने मन्दिर के पीछे के द्वार की ओर भागे-भागे गये। वहाँ भगवान् के दर्शन पाकर वह भोला भक्त भी तृप्त हो गया। **मन्दिर के भीतर पिछले द्वार के पास भी भगवान् की मूर्ति खड़ी है और द्वार के बाहर उस भक्त की प्रतिमा भी देखी जा सकती है।** जब हमने उस मन्दिर की यात्रा की तो पुराणकाल के हिन्दुत्व के उस भगवान् की दयनीय स्थिति पर रोना भी आया। भगवान् जी अपने भक्त को मिलना तो चाहते थे, परन्तु पोपों ने उसे बन्दी बना रखा था। वह बन्धन तोड़ कर मन्दिर के बाहर आकर अपने भक्त को गले न लगा सके। अब यह दृश्य दिखाने से क्या लाभ? इससे धर्म व दर्शन की क्या प्रतिष्ठा बढ़ रही है? **यह तो भेद-भाव, ऊँच-नीच तथा अस्पृश्यता के कलङ्क का एक स्मारक है।** अच्छा होगा यदि मोदीजी इस घटना की स्मारक इन मूर्तियों

को वहाँ से उठवा दें। इसके लिये असाधारण साहस चाहिये। लगता है कि हिन्दुत्व की रट लगाने वाले मोदीजी को ऐसा नहीं करने देंगे। हिन्दुत्ववादियों ने आज पर्यन्त देवदासियों, विधवाओं, दलित- उत्पीड़न, बाल-विवाह, अनमेल विवाह, स्त्रियों के लिये वेदाध्ययन के अधिकार के लिये न कभी संघर्ष किया और न बलिदान दिया।

एक साथ कई पुस्तकों का विमोचन- आर्यसमाज न्यू मुलतान नगर दिल्ली ने अपने उत्सव पर डॉ. वेदपाल जी को आमन्त्रित करके उनसे 'ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार' तथा 'मैक्समूलर का एक्सरे' दो पुस्तकों का विमोचन करवाया। लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द ग्रन्थ के तीसरे संस्करण का विमोचन श्री धर्मेन्द्र 'जिज्ञासु' तथा कहानीकार सुदर्शन जी और महाशय चिरञ्जीलाल 'प्रेम' लिखित 'महात्मा गाँधी और आर्यसमाज' नाम की दो पुस्तकों का श्री अनिल आर्य से विमोचन करवाया। एक साथ इन पाँच पुस्तकों को विमोचन एक स्मरणीय, महत्त्वपूर्ण घटना मानी जावेगी। दूर-दूर से आये उत्साही युवकों से कार्यक्रम की शोभा बढ़ गई। समाज ने बाहर से पधारे अतिथियों की बहुत सेवा की। देश-विदेश से 'मैक्समूलर का एक्सरे' पुस्तक की भारी माँग एक अच्छा लक्षण है। पं. लेखरामजी के साहित्य के पश्चात् विधर्मियों के उत्तर-प्रत्युत्तर में लिखी गई यह उसी कोटि की पुस्तक है। एक शताब्दी के पश्चात् आर्यसमाज में ऐसी पुस्तकें लिखी गईं हैं। इसका दूसरा भाग (volume) भी शीघ्र आयेगा।

इसी अवसर पर यशस्वी आर्यसमाजी महाकवि श्रीयुत दुर्गासहायजी 'सुरूर' का आठ सौ पृष्ठों का काव्य संग्रह ग्रन्थ प्रकाशन पूर्व श्रोताओं के सम्मुख लाया गया। आर्यसमाज के इतिहास में किसी आर्यपुरुष के साहित्य व जीवन पर इतना बड़ा व सबसे पहला ग्रन्थ-डॉ. अलिफ़ नाज़िम एक देशप्रेमी मुसलमान द्वारा सम्पादित अति शीघ्र प्राप्त होगा। क्या हम यह आशा करें कि आर्यसमाजें तथा धनीमानी आर्य भाई इसके प्रसार में उदार हृदय से सहयोग करेंगे?

स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज के जन्मदिवस पर- कभी पूज्य उपाध्यायजी ने लिखा था, ''स्वामी श्रद्धानन्दजी का इतिहास आर्यसमाज का इतिहास है।'' कुछ इसी प्रकार के शब्द आपने पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज के विषय में लिखे थे। ये मार्मिक शब्द लिखकर इस महान् विचारक ने सागर को गागर में भर दिया। आपने हमें यह भी लिखा था, ''उनमें दूर तक देखने तथा गहरा सोचने की शक्ति थी।'' हमारे इन दो महान् संन्यासी नेताओं के सम्बन्ध में गो-सेवक लाला हरदेवसहायजी के भी ऐसे ही विचार थे।

आर्यसमाज के गौरवपूर्ण इतिहास में आपको कई मोर्चों पर आर्यसमाज को विजय दिलाने का सौभाग्य व यश प्राप्त हुआ। भरतपुर स्टेट का मोर्चा हो अथवा समालखा आर्यसमाज की शोभायात्रा हो, महाशय राजपाल की प्राण-रक्षा और खुदाबख़्श पहलवान हत्यारे को धर दबोचना हो, लोहारू का रक्तिम काण्ड हो अथवा हैदराबाद आर्य सत्याग्रह का महासंग्राम हो, स्वामी स्वतन्त्रानन्द की तपस्या तथा नेतृत्व के कारण आर्यसमाज को हर मोर्चे पर विजय का डंका बजाने का गौरव प्राप्त हुआ।

एक बार अकालियों के एक पत्र में सम्पादकीय में हमने ये शब्द पढ़े थे, ''सिखों के पास सब कुछ है बस एक स्वामी स्वतन्त्रानन्द नहीं है।'' स्वामीजी के जीवनकाल में ही यह सम्पादकीय छपा था। आर्यजाति इस महाबलिदानी तपस्वी साधु पर जितना भी गौरव करे वह थोड़ा है। पग-पग पर इस महान् विभूति ने इतिहास रचकर आर्यसमाज का सिर ऊँचा किया।

इन पंक्तियों के लेखक को इस शूर-शिरोमणि, गुणी, गम्भीर संन्यासी और मानव-निर्माण कला के चतुर शिल्पी के जीवन -चरित्र 'लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द' ग्रन्थ के लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस जीवन चरित्र के सम्बन्ध में भी यहाँ दो विशेष प्रसंग देने का लोभ संवरण नहीं किया जा सकता। इस लेखक ने श्री स्वामी सर्वानन्द जी की कुटिया में उन्हें कहा था, ''मुझसे जैसा भी हो सका, भागदौड़ करके जीवन-चरित्र लिख दिया। अच्छा होता यदि पं. शिवदत्त जी जैसा विद्वान् इस कार्य को कर दिखाता।''

इस पर स्वामीजी ने कहा, ''अच्छा हुआ जो उन्होंने नहीं लिखा। वह आपके सदृश भागदौड़ करके इतनी सामग्री न ला पाते। आपने इसके लिये देश के दूरस्थ नगरों व

ग्रामों की यात्रायें करके इतिहास की दृष्टि से जैसा लिखा है, वह ऐसा न लिख पाते।''

श्रद्धेय पं. गंगाप्रसादजी उपाध्याय ने लिखा है, ''स्वामी स्वतन्त्रानन्द की जीवनी तो तुम्हारी अद्‌भुत कृति है।'' विश्व-प्रसिद्ध, आर्यविचारक तथा साहित्यकार उपाध्याय जी ने इसे 'अद्‌भुत कृति' बताया तो यह कोई कर्मकाण्ड पूरा करने के लिये नहीं लिखा। उनकी ऐसी सोच ही नहीं थी। खेद है कि आर्यसमाज में केवल स्वामी सत्यप्रकाशजी ने ही उपाध्यायजी के इन मार्मिक शब्दों पर कुछ लिखा।

आर्यसमाज के इतिहास के सबसे बड़े संग्राम का संचालन करते समय शोलापुर में जिन छोटे-बड़े आर्यवीरों तथा विद्वानों ने और नेताओं ने उनके साथ तब कार्य किया। इस सेवक ने **केवल इस सेवक ने ही एक-एक** छोटी-बड़ी घटना के बारे में उनका साक्षात्कार लिया। शोलापुर की चाटी गली के मारवाड़ी सेठों से स्वामीजी के बारे में बहुत कुछ कुरेद-कुरेद कर पूछा। वहीं तिलक चौक में नित्यप्रति जत्थों को जेल भेजते हुये महाराज अपना विदाई सन्देश व आशीर्वाद दिया करते थे। हरिपन्त गुरुजी से भी पर्याप्त सामग्री प्राप्त की। लंगर में कार्य करने वालों से, स्टेट में गुप्तचर के रूप में सूचनायें लानेवालों से, सरकार द्वारा शोलापुर शिविर प्रतिबन्धित करने का आदेश देते समय जब स्वामीजी ने हस्ताक्षर किये, इस घटना के साक्षी तक के संस्मरण प्राप्त किये। इस सत्याग्रह में विजय का एक मुख्य कारण थे श्री पं. रुचिरामजी। उनसे केवल राजेन्द्र 'जिज्ञासु' ने ही सत्याग्रह तथा पूज्य स्वामीजी की नीतिमत्ता के मार्मिक संस्मरण प्राप्त किये। इसे आर्यसमाज का दुर्भाग्य ही समझना चाहिये कि इस ग्रन्थ का लाभ लेनेवाले किसी भी छोटे-बड़े लेखक ने उपाध्याय जी के दो शब्दों 'अद्‌भुत कृति' पर एक भी पंक्ति आज तक नहीं लिखी। इससे न तो उपाध्यायजी की कोई हानि हुई है और न ही लेखक इस कारण से छोटा हो गया है, परन्तु यह स्वामीजी **महाराज के प्रति तथा आर्यसमाज के प्रति घोर अन्याय का एक उदाहरण है।** इसका एक नवीनतम उदाहरण सान्ताक्रूज मुम्बई समाज के मासिक पत्र के अक्टूबर-नवम्बर में प्रकाशित श्रीमती अपर्णा शुक्ला का अनर्थकारी लेख है। लेखिका ने तो जो लिखना था सो लिख दिया, परन्तु सम्पादक मण्डल तथा समाज के कर्णधारों के अद्‌भुत ज्ञान का भी पता चल गया। श्री महाशय कृष्ण जी ने ठीक ही लिखा था कि ''**अब आर्यसमाज बौने दिमागों के हाथ में आ गया है।**'' सन् १९४१ में भाई वंशीलालजी के जीवनकाल में सार्वदेशिक सभा ने आर्य सत्याग्रह हैदराबाद के थोड़ा समय पश्चात् एक ''**आर्य डायरेक्ट्री**'' नाम का उत्तम ग्रन्थ छपवाया था। इसके पृष्ठ २२२ पर '**सत्याग्रह के अधिनायक**' उपशीर्षक से आर्यसत्याग्रह पर विस्तृत प्रामाणिक लेख में यह लिखा है, ''**इस धर्मयुद्ध के मुख्य नायक श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज कार्यकर्त्ता प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा रहे। आप प्रारम्भ से अन्त तक प्रधान शिविराध्यक्ष रहे। तथा समय-समय पर निम्न सर्वाधिकारियों ने सत्याग्रह का नेतृत्व किया।**''

नूतन निष्काम पत्रिका की लेखिका इतिहास को तोड़-मरोड़ कर मनगढ़न्त कहानियाँ लिखकर इतिहास प्रदूषण का पाप करके भ्रम फैलाने की कुचेष्टा कर रही हैं। भाई वंशीलाल की सेवाओं को सब मान देते हैं, परन्तु उन्हें निजाम राज्यसभा के मन्त्री के नाते **सत्याग्रह का संचालक या नायक बताना एक निन्दनीय कर्म है।** सत्याग्रह सार्वदेशिक सभा द्वारा संचालित था। निज़ाम सरकार से समझौता सार्वदेशिक सभा ने किया। भाई वंशीलालजी समझौता वार्ता में भी नहीं थे। शूरशिरोमणि शहीद श्यामभाई का गौरव कौन नहीं जानता? लेखिका ने पूज्य क्रान्तिवीर पं. नरेन्द्रजी, वीर शिवचन्द्रजी, धर्मप्रकाशजी, श्री शेषरावजी, भीमरावजी हुपला, पं. रुद्रदेवजी, पं. कर्मवीरजी, गुरु हरिपन्तजी तथा राज्य के सर्वाधिकारियों सबका बहिष्कार करके अपने परिवार को महिमामण्डित करने का अच्छा उपाय निकाला। पूज्य श्यामभाईजी का शव कैसे प्राप्त किया गया? उन्हें मुखाग्नि किसने दी? पं. रुचिराम जी सत्याग्रह में विजय का एक मुख्य कारण थे। **पं. नरेन्द्रजी के नाम तथा काम को मिटाने का दुःस्साहस देखकर हम दंग रह गये हैं। श्री पं. त्रिलोकचन्द्र जी, पं. गंगाप्रसाद उपाध्यायजी के योगदान की उपेक्षा करके 'काली इमली' की गप्प परोसने से कोई इतिहासकार नहीं बन सकता।**

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पं. गंगाप्रसादजी उपाध्याय

और पं. नरेन्द्रजी ने भाई वंशीलाल जी की सेवाओं का यथार्थ मूल्याङ्कन किया है। सत्याग्रह का यथार्थ इतिहास बना रहने दिया जावे। आश्चर्य का विषय तो हमारे लिये यह है कि **आर्यसत्याग्रह के फील्डमार्शल के रूप में सारे आर्यजगत् द्वारा दिल्ली में महात्मा नारायण स्वामीजी की उपस्थिति में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का अभिनन्दन किया गया और इस पत्रिका के लेख में स्वामीजी का नामोल्लेख भी नहीं है। आर्यसमाज के लिये तिल-तिल जलने व जीनेवाले बाल ब्रह्मचारी के प्रति ऐसी घृणित सोच रखने वालों को प्रभु सद्बुद्धि प्रदान करें।**

भगवान् का अपमान कैसे?- टी.वी. पर भाजपा के एक प्रवक्ता ने स्वामी विवेकानन्द जी की मूर्त्ति का अपमान करने वालों की निन्दा करते हुये इस करतूत को भगवान् का अपमान बताया, ऐसे लोग देश के वातावरण को दूषित करने के अपराधी हैं, परन्तु मूर्त्ति के अपमान को भगवान् का अपमान मानना भी कोई स्वस्थ सोच नहीं। यह भी एक भ्रम और भूल है। भगवान् का अपमान कौन कर सकता है। संसार में करोड़ों नास्तिक उसको कोसते देखे जाते हैं। क्या आज तक वे किसी सृष्टि-नियम को ठप्प कर पाये हैं? स्मरण रखिये मूर्तियाँ गढ़-गढ़कर उनको आप लगवा तो सकते हैं, परन्तु उनकी रक्षा-व्यवस्था कौन कर सकता है? लुटेरे, डाकू, समाजद्वेषी तत्त्व मूर्तियाँ तोड़ते ही रहेंगे। श्री अटलजी की लखनऊ में मूर्ति लगनेवाली है। हमें तो उसकी भी चिन्ता है। जब गाँधी बापू और डॉ. अम्बेडकर की मूर्त्तियों को दुष्ट जन तोड़ते रहे हैं तो फिर अटल जी अपवाद कैसे हो सकते हैं?

जहाँ कन्या पूजन होता है- उत्तरप्रदेश के मुख्यमन्त्री जी ने कन्या-पूजन करके फोटो खिंचवाई। श्री भागवत जी ने विधर्मी बन चुके करोड़ों लोगों को भी हिन्दू घोषित कर दिया। मन के सन्तोष के लिये तो यह कथन अच्छा है। बलात्कार की लज्जाजनक निन्दनीय घटनायें भी उसी देश में नित्यप्रति घट रही हैं-

कहाँ है कन्या पूजन?
आतंकित करते दुर्जन।।

रामदेव जी इस पाप को रोकने के लिये गीता का पाठ करने का सुझाव दिया है। विचार तो अच्छा है, परन्तु लोगों ने योग शिविर लगाकर करोड़ों कमा लिये। ट्रस्ट बना लिये। न तो कन्या-पूजन से तथा न ही योग से लोग **सुपथगामी** बने। प्रतीत होता है देश में किसी सोचे-समझे षड्यन्त्र से पापी नित्यप्रति ऐसी घटनायें कर और करवा रहे हैं। श्री मुलायम सिंह की कोटि के एक अनुभवी नेता ने जब ''बच्चे हैं, भूल हो ही जाती है'' यह कहकर कठोर दण्ड न देने की वकालत की थी और अब भाजपा की मेनका गाँधी जनता की इस घृणित पापकर्म पर प्रतिक्रिया देखकर भी दुष्कर्म करनेवालों की मौत पर अश्रुपात कर रही है तो इस बुराई को रोका कैसे जावे?

कन्या-पूजन तो कई शताब्दियों से हो रहा है। स्त्रियों को पढ़ने के अधिकार से वञ्चित कर दिया गया। वेद पढ़ने का अधिकार भी स्त्रियों तथा दलितों से छीन लिया गया। बाल विधवायें दो-दो चार-चार वर्ष की लाखों की संख्या में नारकीय जीवन बिताती रहीं। बड़े-बड़े मन्दिरों में देवदासियाँ नारकीय जीवन बिताती रहीं। महर्षि दयानन्द तथा महान् स्वामी श्रद्धानन्द के अतिरिक्त कोई नेता, कोई विचारक, कोई महात्मा, संन्यासी इस अन्याय, इस पाप से टक्कर लेने आगे न आया।

दलबन्दी से ऊपर उठकर नेता लोग मिलकर कुछ करें। योग से भोग की और भागते हुये हमने बाबों को जब देखा तो रोना आया। साधु-संन्यासी ग्राम-ग्राम, नगर-नगर पद यात्रायें निकालें। सदाचार संयम की लहर चलाई जानी चाहिये। जिनके घर में बेटियाँ हैं उनको कन्यापूजन के कर्मकाण्ड से चिन्तामुक्त नहीं किया जा सकता। संयम, सदाचार, सादगी और ब्रह्मचर्य की प्रचार पताका फहराने वाले लाखों युवक आगे आयें।

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज डोहरिया, तह. फूलियाकलाँ, जि. भीलवाड़ा का वार्षिकोत्सव दि. २५ से २७ नवम्बर २०१९ को मनाया गया। वेद-प्रचार एवं भजन-उपदेश श्री भूपेन्द्रसिंह, श्री अमरसिंह एवं श्री लेखराज शर्मा ने किया। सी.सै. स्कूल डोहरिया, तसवारिया, रहड़, डाबला चान्दा एवं उ.प्रा.वि. उम्मेदपुरा व शिवपुरी में भी वेद-प्रचार कार्य किया गया। इस पुनीत कार्य में आर्यसमाज कादेड़ा, चापानेरी, शाहपुरा एवं पनोतिया का सहयोग रहा।

ऐतिहासिक कलम से....

अध्ययन और अध्यापन की ऋषि-निर्दिष्ट विधि

(सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास के आधार पर) - ३

स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

अब आगे के अंकों में परोपकारी पत्रिका अपने 'ऐतिहासिक कलम से' नामक शीर्षक के माध्यम से पाठकों को कुछ ऐसे लेखों से परिचित करायेगी जो 'आर्योदय' (साप्ताहिक) के सत्यार्थप्रकाश विशेषांक से लिये गये हैं। यह विशेषांक दो भागों में छपा था। पूर्वार्द्ध के सम्पादक श्री प्रकाशजी थे तथा उत्तरार्ध के सम्पादक पं. भारतेन्द्रनाथजी तथा श्री रघुवीर सिंह शास्त्री थे। यह विशेषांक विक्रम संवत् २०२० में निकाला गया था। यहाँ यह स्मरण रखना जरूरी है कि इस विशेषांक में जो लेख प्रस्तुत किये गये हैं वे पं. भारतेन्द्रनाथ जी ने विद्वानों से आग्रहपूर्वक लिखवाये थे, जो कि पण्डित जी अक्सर किया करते थे। उसी विशेषांक के कुछ चयनित लेख पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किये जा रहे हैं। जिनमें यह तृतीय लेख 'अध्ययन और अध्यापन की ऋषि-निर्दिष्ट विधि' आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्वामी समर्पणानन्द सरस्वतीजी द्वारा लिखा गया है। -सम्पादक

सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में ऋषि ने इतनी बातें कहीं हैं-

(१) सच्चा आभूषण विद्या है, वे ही सच्चे माता-पिता और आचार्य हैं जो इन आभूषणों से सन्तान को सजाते हैं।

(२) आठ वर्ष के हों तब ही लड़के-लड़कियों को पाठशाला में भेज देना चाहिए।

(३) द्विज अपने घर में लड़के-लड़कियों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके आचार्यकुल में भेज दें।

(४) लड़के-लड़कियों की पाठशाला एक-दूसरे से दूर हो तथा लड़कों की पाठशाला में लड़के अध्यापक हों, लड़कियों की पाठशाला में सब स्त्री अध्यापिका हों, पाठशाला नगर से दूर हो।

(५) सबके तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन हों।

(६) सन्तान माता-पिता से तथा माता-पिता सन्तान से न मिलें, जिससे संसारी चिन्ता से रहित होकर केवल विद्या पढ़ने की चिन्ता रखें।

(७) राजनियम तथा जातिनियम होना चाहिए कि पाँचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के-लड़कियों को घर में न रख सके।

(८) प्रथम लड़के का यज्ञोपवीत घर पर हो, दूसरा पाठशाला में आचार्य कुल में हो।

(९) इस प्रकार गायत्री मन्त्र का उपदेश करके सन्ध्योपासन की जो स्नान, आचमन, प्राणायाम आदि क्रिया हैं, सिखावें।

(१०) प्राणायाम सिखावें, जिससे बल, पराक्रम जितेन्द्रियता व सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझ कर उपस्थित कर लेगा, स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करें।

(११) भोजन, छादन, बैठने, बोलने-चालने, बड़े-छोटे से व्यवहार करने का उपदेश करें।

(१२) गायत्री मन्त्र का उच्चारण, अर्थ-ज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल-चलन को करें, परन्तु यह जप मन से करना उचित है।

(१३) सन्ध्योपासन जिसको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं, दूसरा देवयज्ञ जो अग्निहोत्र और विद्वानों के संग, सेवादि से होता है। सन्ध्या और अग्निहोत्र सायं-प्रातः दो ही काल में करें। ब्रह्मचर्य में केवल ब्रह्मयज्ञ और अग्निहोत्र ही करना होता है।

(१४) ब्राह्मण, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य का उपनयन करे, क्षत्रिय दो का, वैश्य एक का; शूद्र पढ़े, किन्तु उसका उपनयन न करें, यह मत अनेक आचार्यों का है।

(१५) पुरुष न्यून से न्यून २५ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रहे; मध्यम ब्रह्मचर्य ४४ वर्ष पर्यन्त तथा उत्कृष्ट ४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य रक्खे। जो (स्त्री, पुरुष) मरणपर्यन्त विवाह

करना ही न चाहे तथा वे मरणपर्यन्त ब्रह्मचारी रह सकते हों तो भले ही रहें, परन्तु यह बड़ा कठिन काम है।

(१६) ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहें तो क्षत्रियादि को वेदादि सत्यशास्त्रों का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें। क्योंकि क्षत्रियादि को नियम में चलाने वाले ब्राह्मण और संन्यासी तथा ब्राह्मण और संन्यासी को सुनियम में चलाने वाले क्षत्रियादि होते हैं।

(१७) पाठविधि व्याकरण को पढ़ के यास्कमुनिकृत निघण्टु और निरुक्त छः वा आठ महीने में सार्थक पढ़ें, इत्यादि।

(१८) ब्राह्मणी और क्षत्रिया को सब विद्या, वैश्या को व्यवहार-क्रिया और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या पढ़नी चाहिए जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये; वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प-विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिये।

इन १८ सूत्रों को मैं तृतीय समुल्लास के १८ अंग कहूँगा और अति संक्षेप से इसमें दिये हुए बीजों को अंकुरित करने का प्रयास ही किया जा सकता है और वही किया जाएगा। प्रथम यदि इन पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करें तो इनका विभाग इस प्रकार है-

प्रथम दो अंग माता-पिता के प्रति उपदेश हैं। तीसरा जाति-नियम द्वारा गुरु-शिष्य के सामीप्य का समर्थक है। चौथा शिक्षा शास्त्र-सम्बन्धी नियम है जो ब्रह्मचर्य की रक्षार्थ है। पाँचवाँ बच्चों में समानता तथा सरल जीवन का आधार है। छठा शिक्षा शास्त्र-सम्बन्धी नियम है जो निश्चिन्तता उत्पन्न करके गुरु-शिष्य में सामीप्य की पुष्टि करता है। सातवाँ राजनियम तथा जाति-नियम द्वारा मोह का निराकरण तथा गुरु-शिष्य के सामीप्य का स्तम्भ रूप है। आठवाँ सामाजिक नियम द्वारा गुरु-शिष्य के सामीप्य का पोषक है। नवाँ सन्ध्योपासन द्वारा ईश्वराधीनता का अर्थात् सच्ची स्वाधीनता का शिक्षा में प्रवेश कराना है। दसवाँ तथा ११वाँ बच्चों को सच्ची दिनचर्या द्वारा संयम सिखाना है। १२वाँ विनीत भाव सिखाकर संयम की पुष्टि करना है। १३वाँ, १४वाँ भी संकल्प अथवा व्रत द्वारा संयम का सच्चारूप उपस्थित करता है। १५वाँ भी ब्रह्मचर्य न्यून से न्यून कितना हो यह बता कर संयम को व्यावहारिक रूप देता है। १६वें सूत्र में ब्राह्मण तथा क्षत्रियादि का परस्पर नियन्त्रण है। १७वें सूत्र में व्रतचर्या के लिए समय कैसे मिले इसलिए आनुपूर्वी नाम का शिक्षाशास्त्र का महान् रहस्य दिया गया है तथा अठारहवें में चारों वेदों के अध्ययन की लम्बी पाठविधि को यथायोग्य रूप से हर ब्रह्मचारी के बलाबल को देखकर पाठविधि कैसे बनाई जाय इसकी कुञ्जी दी गई है।

शिक्षा का उद्देश्य- इस प्रकार इन अठारह अङ्गों के परस्पर सम्बन्ध की रूपरेखा देकर हम इन पर दार्शनिक विवेचन आरम्भ करते हैं। सबसे प्रथम यह देखना है कि शिक्षा का उद्देश्य क्या है। ऋषि ने शिक्षा का उद्देश्य भर्तृहरि महाराज के "**विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः**" इस श्लोक का उद्धरण देकर किया है। श्लोक का अनुवाद ऋषि के ही शब्दों में इस प्रकार है-

जिन पुरुषों का मन विद्या के विलास में मग्न रहता, सुन्दरशील स्वभाव युक्त, सत्यभाषणादि नियम पालनयुक्त और जो अभिमान, अपवित्रता से रहित अन्य की मलिनता के नाशक सत्योपदेश और विद्यादान से संसारीजनों के दुःखों को दूर करने वाले वेदविहित कर्मों से पराये उपकार करने में लगे रहते हैं, वे नर और नारी धन्य हैं?

बस इस प्रकार के धन्य पुरुष उत्पन्न करना शिक्षा का उद्देश्य है।

भर्तृहरि की खान-ऋषि दयानन्द सा जौहरी, क्या रत्न ढूँढकर निकाला है।

पहला ही शब्द ले लीजिये **विद्याविलासमनसः** हमें छात्रों को ब्रह्मचारी बनाना है। ब्रह्मचारी के दो ही भोजन हैं; एक विद्या, दूसरा परमात्मा। इस भोजन को कभी-कभी खा लेने से वह ब्रह्मचारी नहीं बन सकता। जिस प्रकार विलासी मनुष्य यदि वह भोजन का विलासी है, तो उसमें नये से नये रुचिकर व्यंजन का आविष्कार करता रहता है। यदि रूप का विलासी है तो नये से नये शृंगारों का आविष्कार करने में ही उसका मन लगा रहता है, उसी प्रकार जब विद्या उसके लिए एक विलास की वस्तु बन जाय तब ही तो वह ब्रह्मचारी बन सकेगा, परन्तु यह विद्या में रति बिना शील शिक्षा के नहीं प्राप्त हो सकती। शीलशिक्षा भी वह

जो पूर्णतया धारण कर ली गई हो, अडिग हो, अविचल हो। इसके लिए उसका व्रत धारण करना आवश्यक है, परन्तु ब्राह्मण व क्षत्रियादि के व्रत निश्चल तब ही हो सकते हैं, जब वे सत्य व्रत हों, यह व्रतपरायणता बिना अभिमान दूर किये नहीं हो सकती और अभिमान की परम चिकित्सा है प्रभु-भक्ति; वह अभिमान ही नहीं और सब मलों को भी दूर करने वाली है। इस भक्ति का आरम्भ होता है, संसार के दु:ख दूर करने में ही गौरव मानने से। दु:ख दूर करने से तो भक्ति का मार्ग आरम्भ होता है, परन्तु उसका पूर्ण चमत्कार तो दु:ख दूर करके सच्चा सुख प्राप्त कराने से होता है। यही सबसे बड़ा परोपकार है।

परन्तु दु:खों का निराकरण तथा सच्चे सुख की प्राप्ति का उपाय जाना जाता है वेद से। उसी ने इसका विधान किया है। वेदविहित कर्मों का ठीक ज्ञान न होने से अज्ञानी मनुष्य परोपकार की भावना से प्रेरित होकर भी अपकार ही तो करेगा, इसलिए विहित कर्मों से ही परोपकार होता है। चलो इन विहित कर्मों के ज्ञान के लिए वेद-वेदाङ्ग का ज्ञान प्राप्त करें। यही शिक्षा का आरम्भ है। इसीलिए कहा-

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:,
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्मपरोपकारा:।।

इस प्रकार के धन्य पुरुष इस प्रकार के गुरु के पास पहुँचे बिना कैसे प्राप्त हो सकते हैं। इसीलिये माता-पिता को उपदेश दिया (१) सांसारिक आभूषणों के मोह को तथा उसके मूल सन्तान के मोह को छोड़ो, सन्तान से प्रेम करना सीखो। यहाँ सबसे पहले मोह और प्रेम में भेद करना सीखना है। अनुराग के दो अङ्ग हैं **हितसन्निकर्षयोरिच्छानुराग:** इनमें सन्निकर्ष अर्थात् प्रेमपात्र के वियोग को न सहन करना तथा समीप होने की इच्छा जितनी प्रबल होगी उतना ही प्रेम मोह की ओर भागेगा और जितनी हितेच्छा प्रबल होती जायेगी उतना ही अनुराग प्रेम की ओर उठता जायेगा। यदि सन्निकर्षेच्छा न हो तो माता बच्चे के लिए रातों जाग नहीं सकती, परन्तु हितेच्छा न हो तो गुरुकुल नहीं भेज सकती। इसलिए कहा कि पाँचवें वर्ष तक सन्निकर्षेच्छा समाप्त हो ही जानी चाहिए। यदि सन्तान की दुर्बलता आदि किसी अन्य कारण से सन्तान का माता-पिता के पास रहना आवश्यक भी हो तो ८ वें वर्ष तक तो राजनियम से बच्चे को माता-पिता से पृथक् कर ही देना चाहिए। यही नहीं, गुरु के पास जाने पर मोहवृद्धिकारक माता-पिता का मिलना तथा पत्र-व्यवहार आदि भी बन्द हों; जिससे गुरु-शिष्य में वह सामीप्य उत्पन्न हो जाय, जिसका वेद ने इन शब्दों में वर्णन किया है-

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्त:।
(अथर्व. ११.५.३)

हमें विद्यार्थियों को न्याय सिखाना है। इसलिये सबसे पहले उनके साथ न्याय होना चाहिये। न्याय के दो सिरे हैं, निर्णय के पूर्व समान व्यवहार, निर्णय के पश्चात् यथायोग्य व्यवहार। शिक्षा के आरम्भ-काल में निर्णय नहीं हो सकता। इसलिए उस काल में सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान आसन दिये जावें। इस प्रकार सच्ची समानता उत्पन्न की गई है।

यह समानता दो प्रकार से उत्पन्न की जा सकती है। एक नाना प्रकार के ऐश्वर्य की सामग्री सबको देकर, दूसरे सबको तपस्वी बना कर। राजा के पुत्र को अपरिग्रही के समान रखकर अथवा अपरिग्रही को राज-तुल्य वैभव देकर, परन्तु ब्रह्मचर्य जिनकी शिक्षा का आधार है, वे सरलता द्वारा ही समानता उत्पन्न करेंगे इसलिये तप तथा अपरिग्रह की शिक्षा दी गई है।

शिक्षा का तीसरा आधार स्वाधीनता है, परन्तु स्वाधीनता वस्तुत: ईश्वराधीनता से प्राप्त होती है। जो अपने आपको ईश्वर के अधीन कर देता है, वह फिर न प्रकृति के अधीन होता है न विषयों के। जिस प्रकार स्वेच्छापूर्वक स्वयं चुने हुए विमान पर चढ़ने से मनुष्य की गति में तीव्रता तो अवश्य आ जाती है। इसी प्रकार स्वेच्छापूर्वक प्रभु समर्पण द्वारा मनुष्य अनन्त शक्ति का स्वामी तो हो जाता है, परन्तु पराधीन नहीं होता, इसीलिये ऋषि दयानन्द ने इस समुल्लास में शिक्षा का आरम्भ सन्ध्योपासन से किया है। इसी प्रकार देवयज्ञ की व्याख्या में उन्होंने देवयज्ञ के दो रूप दिये हैं। एक अग्निहोत्र दूसरा विद्वानों का संग-सेवादि। गुरु के तथा विद्वानों के संग-सेवादि से मनुष्य स्व

को पहचानता है। जिसने स्व को ही नहीं पहिचाना, वह स्वाधीन क्या होगा? स्वाधीन शब्द का दूसरा अर्थ आत्मीयों की अधीनता है। जीव का सबसे बड़ा आत्मीय उस वात्सल्य-सागर प्रभु से बढ़ कर कौन हो सकता है? सो सन्ध्योपासन तथा अग्निहोत्र दोनों ही मनुष्य को सच्चे अर्थों में स्वाधीनता दिलाने वाले हैं। अब हम संयम की ओर आते हैं, यह ब्रह्मचर्याश्रम है, हमें शक्ति के महान स्रोत तक पहुँचना है, वहीं सुख है, वहीं शान्ति है, वहीं नित्यानन्द है। नित्य कैसे, मनुष्य का सुख दो प्रकार से समाप्त हो जाता है। भोग्य पदार्थ की समाप्ति से या भोक्ता की रसास्वादन शक्ति की समाप्ति से; परन्तु जब जीव प्रकृति के माध्यम बिना सीधा प्रभु से रस लेने लगता है तो न भोग्य सामग्री समाप्त होती है, न भोक्ता की रसास्वादन शक्ति; बस इस अवस्था तक प्राणिमात्र को पहुँचाने के लिए मनुष्य मात्र को जीव और ईश्वर के बीच आनेवाले मात्र व्यवधानों से पूर्णतया मुक्त करके कैवल्य (Onlyness) तक पहुँचाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। यह उद्देश्य इस समुल्लास में किस प्रकार पूरा किया गया है, अब हमें यह देखना है।

शिक्षा का केन्द्र : आचार

सबसे प्रथम जो बात समझने की है वह यह है कि वैदिक शिक्षा-पद्धति में शिक्षा का केन्द्र आचार-शक्ति है, विचार शक्ति नहीं, इसीलिये वैदिक भाषा में गुरु को आचार्य कहते हैं, विचार्य नहीं। विचार साधन हैं, आचार साध्य है। क्योंकि इसके द्वारा ही मनुष्य ब्रह्म में विचरता-विचरता पूर्णतया ब्रह्मचारी हो जाता है और जब तक वह इस ध्येय तक नहीं पहुँच जाता है, तब तक के लिए उसे एक ही आज्ञा है **''चरैवेति चरैवेति''।**

परन्तु विचार का क्षेत्र उसका चरने का क्षेत्र है। वह नाना प्रकार के विषयों में इन्द्रियों द्वारा विचरता हुआ विषयरूपी घास से ज्ञानरूप दूध बनाता रहता है, परन्तु व्रत के खूँटे से बँधा होने के कारण कभी गोष्ठ-भ्रष्ट अथवा देवयूथ भ्रष्ट नहीं होने पाता। इन्द्रियों का क्षेत्र उसके चरने का क्षेत्र है, परन्तु व्रत उसके बँधने का स्थान है। वह व्रत का खूँटा भगवान् में गड़ा रहता है। इसलिए वह कभी भ्रष्ट नहीं होने पाता। इसीलिये इस शिक्षा-पद्धति में उसका दो बार यज्ञोपवीत किया जाता है। एक माता-पिता के घर में, दूसरा आचार्य-कुल में। ब्राह्मण को संसार में अविद्या के नाश तथा सत्य के प्रकाश का व्रत धारण करना है। क्षत्रिय को अन्याय के नाश तथा न्याय की रक्षा का व्रत धारण करना है। वैश्य को दारिद्र्य के नाश तथा प्रजा की समृद्धि की रक्षा का व्रत धारण करना है। इस यज्ञ अर्थात् लोकहित के व्रत के खूँटे के साथ बँधना है, इसलिए इस बन्धन का नाम यज्ञोपवीत है अर्थात् वह रस्सा जो मनुष्य को लोकहित के व्रत के खूँटे के साथ बाँधने के लिए बनाया गया हो, प्रथम यज्ञोपवीत में माता-पिता उसे किस खूँटे के साथ बाँधना चाहते हैं उनकी इस इच्छा का प्रकाश है।

परन्तु यह वर्ण है, स्वेच्छापूर्वक चुना जानेवाला व्रत है, इसलिए आचार्य की अनुमति से ब्रह्मचारी इसे बदल भी सकता है। इसलिए आचार्य-कुल में दूसरी बार यज्ञोपवीत किया जाता है। इस व्रत का मूल्य मनुष्य समाज ने सेना में तथा गृहस्थाश्रम में तो जाना है। संसार का हर सैनिक किसी न किसी रूप में झण्डे के सामने शपथ लेता है और हर दम्पती किसी न किसी रूप में एक-दूसरे के साथ बँधे रहने की शपथ लेते हैं, परन्तु इस शपथ का लाभ शिक्षा-शास्त्र में लेना यह केवल वैदिक लोगों को ही सूझा। इसके बिना शिक्षा लक्ष्यहीन तीर चलाने के समान है। कोई तीर अचानक लक्ष्य पर भी जा सकता है।

विद्याभ्यास कैसे?

अब आइये विद्याभ्यास की ओर। इस क्षेत्र में सबसे प्रथम तो मनुष्य को प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा परीक्षा करने का ज्ञान होना चाहिए, फिर भाषा का, या फिर अन्य शास्त्रों का; यही क्रम यहाँ रक्खा गया है, परन्तु सबसे अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस क्रम में आनुपूर्वी है। पहले व्याकरण पढ़े, फिर निरुक्त छन्द आदि-यह आनुपूर्वी क्यों रखी गई है। आजकल की शिक्षा-पद्धति में एक विद्यार्थी प्रतिदिन ८ या १० विषय तक पढ़ता है। इस प्रणाली में उसे गुरु-सेवा, आश्रम-सेवा, चरित्र-निर्माण आदि के लिये कोई समय ही नहीं मिलता। इसलिये प्रतिदिन मुख्य रूप से लगातार कुछ समय तक-एक समय तक एक विषय को पढ़कर समाप्त करे, फिर दूसरा विषय आरम्भ करे। इस क्रम से पढ़ने से उसे गुरु-सेवा, पशुपालन,

चरित्र-निर्माण इन सबके लिए पूरा समय मिलता है और इस प्रकार शिक्षा के मुख्य अंग आचार-निर्माण की पूर्णता होती है; जिससे आचार्य (आचारं ग्राह्यति) को आचार्यत्व प्राप्त होता है।

यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है। ऋषि ने लिखा है कि पुरुषों को व्याकरण, धर्म और एक व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य सीखनी चाहिये। इस अत्यन्त मूल्यवान् पंक्ति की ओर ध्यान न देने से आज आर्ष-पद्धति के नाम पर सहस्त्रों विद्यार्थियों के जीवन नष्ट हो रहे हैं।

ऋषि ने चारों वेदों की पाठविधि तो दी है, परन्तु चारों वेदों का पण्डित होना हर एक विद्यार्थी के लिये आवश्यक नहीं ठहराया, उल्टा मनु का प्रमाण देकर लिखा है

षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्यं गुरौ त्रैवैदिकं व्रतम्।
तदर्धिकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा॥

ब्रह्मचर्य ३६ वर्ष, १८ वर्ष अथवा ९ वर्ष का अथवा जितने में विद्या ग्रहण हो जावे उतना रक्खे।

इसको पुरुषों को व्याकरण, धर्म तथा एक व्यवहार की विद्या के साथ मिलाकर पढ़िये। इसका भाव यह है कि व्याकरण तथा धर्म-शास्त्र पढ़ना सबके लिए आवश्यक है। सो धर्म-ज्ञान के लिए जितना व्याकरण पढ़ना आवश्यक है, सो तो सब पढ़ें; इससे विशेष व्याकरण उस विद्या को दृष्टि में रख कर पढ़ें जो उसकी व्यवहार की विद्या है। इसलिए जिसे विद्युत्-

शास्त्र अथवा भौतिक विज्ञान अथवा इतिहास पढ़ना है, उसे महाभाष्यपर्यन्त व्याकरण पढ़ना क्यों आवश्यक है, यह बिल्कुल समझ में नहीं आता? परन्तु आजकल आर्ष-पद्धति के नाम पर जो सब बालकों को जबरदस्ती महाभाष्य पढ़ाया जाता है, इससे उन विद्यार्थियों में से बहुतों का जीवन नष्ट होता है, और आर्ष-पद्धति व्यर्थ बदनाम होती है। ऋषि ने अधिकतम और न्यूनतम दोनों पाठविधि दे दी हैं, विद्यार्थी की उचित शक्ति के अनुसार हर विद्यार्थी को पृथक्-पृथक् पाठ्यक्रम होना चाहिये। इसीलिए गुरु-शिष्य का सदा एकसाथ रहना आवश्यक समझा गया है। जिससे गुरु-शिष्य की रुचि तथा शक्ति दोनों की ठीक परीक्षा करके यथायोग्य पाठविधि बना सके। यहाँ यथायोग्यवाद के स्थान में साम्यवाद का प्रयोग अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हो रहा है।

अन्त में हम इस बात की ओर फिर ध्यान दिलाना चाहते हैं कि वैदिक शिक्षा-पद्धति में संयम अर्थात् ब्रह्मचर्य का स्थान विद्या से ऊँचा माना गया है? संयमहीन शिक्षा कुशिक्षा है। इसलिये सन्ध्योपासन, आनुपूर्वी का पाठ्यक्रम तथा यज्ञोपवीत संस्कार तीनों ही विद्यार्थी को परमात्मा का भक्ति-दान करके ब्रह्मचारी बना देते हैं। इस संयम की जितनी महिमा गाई जाय सो थोड़ी है। इस प्रकार ये १८ के १८ अङ्ग जो इस समुल्लास में पाँच सकारों में परिणत हो जाते हैं, उन पाँच सकारों के नामोल्लेख के साथ ही इस लेख को समाप्त करते हैं-

समानता सरलता सामीप्यं गुरुशिष्ययोः।
स्वाधीन्यं संयमश्चैव सकाराः पञ्च सिद्धिदाः॥

शोक समाचार

१. अतीव दु:ख का विषय है कि पौष कृष्ण प्रतिपदा विक्रमी सम्वत् २०७६ तदनुसार दि. १३ दिसम्बर २०१९ को प्रात: ५ बजे आर्यसमाज के कर्मठ आर्यभजनोपदेशक **श्री वृजपाल कर्मठ** का ९१ वर्ष की अवस्था में निधन हो गया। वे कवि, स्वाध्यायशील, महर्षि दयानन्द सरस्वती व आर्यसमाज को समर्पित व्यक्ति थे। उनका परलोक गमन आर्यसमाज की बड़ी क्षति है।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को उत्तम नवजीवन रूप सद्गति व शोकसन्तप्त परिवार व समाज को इस विकट विपत् में धैर्य प्रदान करे। **परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।**

२. स्वतन्त्रता आन्दोलन की साक्षी व महिला आर्यसमाज गोण्डा, उ.प्र. की प्रमुख स्तम्भ रहीं बाबू ईश्वरशरण परिवार की वयोवृद्ध **श्रीमती भक्तदासी** का ९६ वर्ष की अवस्था में निधन हो गया।

परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ

आचार्य नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'

हमारी संस्कृति की कई विशेषताएँ, जो अन्य धर्मों में नहीं पायीं जातीं। अनन्तकाल के प्रवाह से हमारी जाति में एक ऐसा रक्त- प्रवाह बह रहा है, जिस प्रवाह को अब तक कोई नहीं रोक सका। एक सहस्र वर्ष की दासता, परचक्र, सैकड़ों उलट-फेर भी न रोक सके। चाहे कुछ भी हुआ, कुछ भी देखना पड़ा, हमारी जाति में निम्नलिखित गुण तो किसी न किसी रूप में रहे ही हैं।

आस्तिकता-चाहे हम अपने पूर्वजों-जैसे उत्कृष्ट कोटि के आस्तिक न रहे हों, तथापि आस्तिक रहे हैं अवश्य, आस्तिक हैं अवश्य और आस्तिक रहेंगे अवश्य। नहीं तो, इतनी बड़ी सुदीर्घकालीन दासता में हम जीवित होकर ही कैसे रह सके, यही आश्चर्य है।

इस हमारी अस्ति-बुद्धि को कोई नहीं मिटा सका। हमारे अन्दर ईश्वर-विश्वास बराबर बना रहा। इस संसार का कर्ता, धर्ता, हर्ता कोई अवश्य है, जिसके संकेतमात्र से ही त्रिभुवन तथा लोक-लोकान्तर बनते हैं, बने रहते हैं और अन्त में बिगड़ जाते हैं। उत्पत्ति से लेकर प्रलय तक की गाथा न जाने कब से चली आयी है। उस परमात्मा के अभिध्यानमात्र से प्रलय में बिखरे पड़े हुए अनन्त परमाणुओं में जीवन-संचार होने लगता है। प्रलयावस्था में पड़ी हुई मूल-प्रकृति विकृति की ओर चल पड़ती है और अन्त में यह विराट् जगत् बनता है-

श्वेताश्वर-उपनिषद् में स्पष्ट कहा है कि ऋषियों ने ध्यानावस्थित होकर साक्षात्कार किया-

एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ः,
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।।

हमारी हिन्दू-जाति, आर्य-जाति, उसी विश्वव्यापी, सर्वभूतान्तरात्मा, सर्वभूतनिगूढ़ देव में विश्वास रखती चली आयी है। यह और बात है कि उसको जानने के अनेक उपाय वेदों में, स्मृतियों में, धर्म-शास्त्रों में बतलाए गए हैं। भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से प्रवृत्त हुए दर्शनशास्त्र भी अन्ततोगत्वा उसी की बात पर एकमत हो जाते हैं-यह एक हिन्दू-जाति की विशेषता है और इसी विश्वास के आश्रय से यह जीवित रही है।

मोक्ष-जीवन का विशेष उद्देश्य-दूसरी एक विशेषता इस विश्वास की रही है कि जीवों के इस संसार में आने का विशिष्ट उद्देश्य है और इस जगत् के बनने-बिगड़ने का भी एक विशिष्ट उद्देश्य है। वह है-**भोगापवर्गार्थं दृश्यम्।** (योग.) यह दृश्य-जगत् इसीलिए बना है कि जीव अपने-अपने कर्म-फलानुसार इस संसार में आवें, कर्म-फलों को भुगतें और प्रयत्न करते-करते अपवर्ग तक पहुँचें। यद्यपि अपवर्ग (मोक्ष) प्रत्येक के बूते की वस्तु नहीं है, तथापि पहुँचनेवाले वहाँ पहुँच ही जाते हैं-कितने? कौन कह सकता है, कब? कौन कह सकता है?

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् की बात सर्वविदित ही है। जीव अपने कर्मानुसार विविध योनियों में होकर अन्त में मनुष्ययोनि में आकर, यहाँ से प्रयत्न करते-करते अपवर्ग तक पहुँच जाते हैं। उत्तम आचरण वाले उत्तम योनियों को प्राप्त करते हैं, निकृष्ट आचरण वाले निकृष्ट योनियों को। इस सिद्धान्त को हम मानते चले आये हैं। यही कारण है कि हम किसी भी दशा में रहें किसी भी दशा में पहुँचें, समाधानपूर्वक कर्मफलों को भुगतने की मनोभूमिका रखते हैं- इस जाति के जीवित रहने का दूसरा यह कारण है।

ईश्वरीय न्याय में विश्वास-तीसरी विशेषता यह रही है कि हम ईश्वरीय न्याय में अटल विश्वास रखते चले आए हैं। हम पर कैसी भी बीती, हम इसी विश्वास पर अधिकतर जीवित रह सके हैं। ये दुःख क्यों आए? अपने कर्मों का फल। यही हिन्दूजाति की मनोभावना रही है। हमने अपने कर्मानुसार प्राप्त सुख-दुःखों के लिए अन्य किसी को दोष देने की बात सीखी ही नहीं।

कर्मफल पर विश्वास-चौथी विशेषता अपने कर्मफलों पर दृढ़ विश्वास की है। जब हमने अच्छे अथवा बुरे कर्म किए हैं, तब इनका फल दूसरा कौन भुगतेगा हमको छोड़कर। यह बात हमारी जाति के हृदयान्तरतल में गड़ी हुई है।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।

फलदाता वही परम कारुणिक भगवान् है, जिनके न्याय में भी दया रहती है। इसीलिए हिन्दू जाति में किसी के सुख को देखकर डाह नहीं होता, बल्कि दूसरे के दु:खों को देखकर उसमें करुणा उत्पन्न होती है।

प्राणियों में आत्मदर्शन–हिन्दूजाति की पाँचवीं विशेषता यह है कि वह सब प्राणियों में आत्मैकत्व को देखती रही है। इसका फल यह हुआ कि हिन्दू अन्यों के सुख-दु:खों को भी अपने सुख-दु:खों की दृष्टि से देखता चला आया है। गीता में इसी समबुद्धि पर बल दिया गया है। हिन्दूजाति जीवों की ऊपरी विषम दशा को देखकर कभी नहीं घबराती। वह तो अन्तरात्म-समता की दृष्टि रखती रही है।

सारांश हमारी हिन्दू जाति कौड़ी मूल्य की भी नहीं रहती, यदि उसमें यह अध्यात्म-दृष्टि, सर्वभूतैकत्व अथवा सर्वात्मैकत्व की दृष्टि न रहती। वर्तमान अध्यात्मशून्य दृष्टिवाले एकमात्र भौतिक उन्नति में लोलुप पाश्चात्य राष्ट्र अथवा पाश्चात्य मिशनवादी यही तो भूलते हैं और केवल आपातरम्य जगत् पर दृष्टि डालकर सबको सम-समान बनाने की बात कहते रहते हैं। इनके पास भीतरी समता को देखने के लिए न आँखें हैं न और कुछ। इसीलिए कोरा विज्ञान, अध्यात्मशून्य विज्ञान भी इनको नहीं तार रहा है। नारद क्या कम विज्ञानी थे? किन्तु आत्मतत्त्व को जानकर ही सुखी हुए। आत्मज्ञान के बिना उनकी सब विद्याएँ ज्ञान-विज्ञान निरर्थक सिद्ध हुए। पाश्चात्य विज्ञानवादी सांसारिक तुच्छ पदार्थों में ही सुख मान रहे हैं और अध्यात्मदृष्टि के न रहने से-

यत् वै भूमा तत्सुखं, नाल्पे सुखमस्ति।
भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्यः।

(छान्दोग्य.)

इस भूमातत्त्व (आत्म-परमात्मतत्त्व) को न जानकर भटक रहे हैं। अन्त में भटक-भटकर इनको भी हमारे मार्ग पर ही आना पड़ेगा।

फिर प्रश्न हो सकता है कि हिन्दू-जाति में ऐसे-ऐसे गुण थे तो एक सहस्र वर्ष पर्यन्त दास्यपङ्क में क्यों फँसी रही?

उत्तर यह है कि ईश्वर ने किसी जाति को कोई किसी प्रकार का ताम्रपट्ट तो दे नहीं रखा कि यही जाति संसार में सदैव के लिए सर्वोपरि रहेगी। जलयन्त्रचक्रवत् (रँहट) उन्नति तथा अवनति के चक्र नीचे-ऊपर होते ही रहते हैं। इस नियम का हमारी हिन्दू जाति ही अपवाद क्यों बनी रहती? हमारा धर्म केवल नि:श्रेयस की बात नहीं कहता और न केवल भौतिकवाद की बात करता है। हमारे ऋषि तो कहते हैं कि जिससे अभ्युदय और नि:श्रेयस-दोनों की सिद्धि हो, वह धर्म है। हम स्वतन्त्र हुए सही, अब इस स्वतन्त्रता के आश्रय से हमें पुन: इस भारत में भारतीय ढंग की संस्कृति लानी है। इसलिए वर्तमान राज्य-प्रणाली में भी देश-काल-धर्मारूप कतिपय अभीष्ट परिवर्तन करने पड़ेंगे। वर्तमान पाश्चात्य प्रजातन्त्र-प्रणाली का अनुकरण युगधर्म हो सकता है, पर उसका भारत में अन्धानुकरण करके हम सुखपूर्वक जीवित न रह सकेंगे।

जिस युग में हम विचर रहे हैं, वह एक संक्रमणात्मक युग है, जिसमें स्थिरता भी नहीं, गम्भीरता भी नहीं। एक शिक्षा की ही बात लीजिए। वर्तमान समय में जिस प्रकार की शिक्षा दी जा रही है, उससे भारत का चरित्र कभी सुधरेगा- ऐसी आशा रखना दुराशामात्र है। मुझ-जैसे प्राचीन शिक्षाभिमानी को इस युग में यह प्रतीत हो रहा है कि अन्धकार ने प्रकाश को ललकारा है कि - आ, जरा ठहर, तेरी खबर लूँ। अब तक तो तूने मुझे बहुत परेशान कर रखा था और संसार में मुझे छिपने के लिए स्थान तक नहीं छोड़ा था। अब इस युग में तेरे लिए कोई स्थान नहीं छोड़ूँगा। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि प्रकाश अपने प्राण बचाकर भाग रहा है और अन्धकार उसका पीछा कर रहा है। यदि भारत में भारतीयता का अन्त हो गया तो हम स्वतन्त्र होकर भी स्व-स्वरूप को भूलकर क्या जीवित रहेंगे?

भारत का नाम बिगड़ जाय और रूप भी बिगड़ जाय–तो नामरूप दोनों के बिगड़ जाने से भारत का क्या शेष रह जायेगा। अब तक तो भारत का किसी प्रकार नाम चला जा रहा है। रूप तो सहस्र वर्ष से विकृत होता चला आ रहा है। अब इस विकृत रूप को मिटाकर पूर्ववत् सुन्दर-मनोहरी रूप बनाने के लिए समस्त प्रयत्न होने चाहिएँ।

पर क्या किया जाय? कभी यह वर्तमान प्रजातन्त्र

प्रणाली प्रत्यक्ष रूप में अपने आर्यधर्म, आर्यसंस्कृति, आर्यसभ्यता की पोषक और पालक बन सकेगी, ऐसी आशा करना दुराशामात्र होगी। जब शिक्षा-संस्थाओं में ही धर्मशिक्षा को प्रतिष्ठित अधिष्ठान नहीं मिल रहा, तब क्या होगा-यह एक चिन्तनीय विषय बन गया है। जब छात्र-छात्राओं की सह-शिक्षा का अनर्थकारी परिणाम भी हमारी समझ में आ रहा है, तब क्या कहा जाय? जबकि गोहत्यानिषेध की बात भी अब तक हमारी समझ में नहीं आ रही है, तब क्या समझा जाय कि हम किधर जा रहे हैं? हम लोग आज यदि भारतीय धर्म का अध्ययन करते हैं, तो पाश्चात्य-दृष्टि से करते हैं। भारतीय धर्म की उत्तमता स्वीकार करने के लिए भी हमें पाश्चात्य-दृष्टि चाहिए। भारतीयों के रोगों की ओषधियों के भारत में रहते भी हम पाश्चात्य औषधियों को मँगाने में करोड़ों रुपये खर्च करते हैं, तब तो बड़ा विस्मय होता है। महात्मा गाँधीजी जीते-जी महाघोष कर गये कि मशीनी-युग को समाप्त करो, पर हम करोड़ों रुपये मशीनों पर लगाते ही चले जाते हैं। राज्यशासनचक्र अभी तक विलायती ढंग के ही हैं-खाली, उनको चलाने वालों के गोरे हाथ बदलकर हमारे काले हाथ लग रहे हैं।

एक ओर बेकारी-बेकारी चिल्लाते हैं, दूसरी ओर स्कूल-कॉलेज और विश्वविद्यालयों द्वारा-अस्वाभाविक, अभारतीय, अनुपयोगी शिक्षा द्वारा बेकारी को बढ़ाते ही चले जा रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अभी तक हमारे भारतीय नेता शिक्षा की जटिल समस्याओं को सुलझाने में समर्थ नहीं हो सके हैं। वैसे ये नेता एकस्वर से वर्तमान शिक्षा-दीक्षा की बुराई करते हुए सुने जाते हैं।

फिर क्या निराशा ही निराशा है? आशा के संचार के लिए स्थान नहीं है?

है क्यों नहीं, जिस करुणानिधान भगवान् ने स्वतन्त्रता दिलायी, वही आगे भी वर्तमान परिस्थितियों के रहते हुए भी उन्हीं में से ऐसी विचित्र परिस्थिति उत्पन्न करेगा, जिससे भारत अपने अभीष्ट पथ की ओर अग्रसर होता जायेगा। इस कार्य में देर अवश्य है, पर अन्धेर नहीं। भारतवर्ष की धर्मप्राण जाति को इस कार्य में अपेक्षित त्याग-तपस्या करनी ही पड़ेगी। संस्कृत के विद्वान्, जिन्होंने आज तक संस्कृत-विद्या के रक्षार्थ कुछ परम्परा द्वारा प्रयत्न किए, उनको पुनः एक बार त्याग-तपस्या का मार्ग अपनाना पड़ेगा, तब कहीं संस्कृत-विद्या की रक्षा हो सकेगी। हमारी सरकार के पास अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा के लिए करोड़ों, अरबों रुपये हैं, पर संस्कृत के लिये-जिसके आश्रय से आज तक भारतीय धर्म, संस्कृति, सभ्यता जीवित रही-पैसा नहीं है, संस्कृत-विद्या के लिए आस्था नहीं, श्रद्धा नहीं। हमारे ही उत्तर प्रदेश में धनाभाव के कारण लगभग १५०० संस्कृत पाठशालाएँ तथा विद्यालय आधे मुरझा गये हैं। काशी, जो कि किसी समय संस्कृत-विद्या का गढ़ था, अब वह भी मुरझा चला है। जब संस्कृत के केन्द्र ही मुरझा रहे हैं, तब भारतीय संस्कृति ही कहाँ रहे और कहाँ श्वास-प्रश्वास ले-**धर्मो रक्षति रक्षितः** -यही सत्य है।

विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्तें। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है। (स.प्र. स. ३)

विद्या की प्रगति कैसे?

वर्णोच्चारण, व्यवहार की बुद्धि, पुरुषार्थ, धार्मिक विद्वानों का संग, विषय कथा-प्रसंग का त्याग, सुविचार से व्याख्या आदि शब्द, अर्थ और सम्बन्धों को यथावत् जानकर उत्तम क्रिया करके सर्वथा साक्षात् करता जाय। जिस-जिस विद्या के कारण जो-जो साधनरूप सत्यग्रन्थ है उन उनको पढ़कर वेदादि पढ़ने के योग्य ग्रन्थों के अर्थों को जानना आदि कर्म शीघ्र विद्वान् होने के साधन हैं। (व्य. भा.)

गुरुकुल की ओर से

विकास आर्य

मनुष्य का स्वभाव जन्म से ही ऐसा होता है कि जो बात उसे अपने अनुकूल लगती है उसे वह सत्य मान लेता है तथा जो बात उसे अपने प्रतिकूल लगती है उससे वह दूरी बना लेता है, भले ही वह बात वेदादि शास्त्रों की दृष्टि से उचित ही क्यों न हो। जो-जो बातें मनुष्य के अनुकूल होती हैं अर्थात् जिसमें उसे अपना लाभ होता हुआ दिखता है, उन बातों को सत्य सिद्ध करने के लिए वह अनेकों तर्क-वितर्क भी करता है। इसी अनुकूलता और प्रतिकूलता के आधार पर ही वह अपने सलाहकार, हितैषी या गुरु आदि का भी चुनाव करता है। जो व्यक्ति उसे उसके अनुकूल बातें बताता है या सलाह देता है, उसे तो वह अपना सच्चा सलाहकार, हितैषी, गुरु मान लेता है और जो कोई व्यक्ति उसे सच्ची बात बताये किन्तु प्रथम दृष्ट्या वह उसे अपने अनुकूल न लगे तो, ऐसे व्यक्ति से मनुष्य दूरी बना लेता है।

ईश्वर सब मनुष्यों को उनके अच्छे-बुरे कर्मों के अनुसार फल देता है। यह ईश्वर की अटूट व्यवस्था है, किन्तु आज समाज में अनेक मत-पन्थ-सम्प्रदाय ऐसे हैं जो परोक्ष रूप से ईश्वर की इस न्याय-व्यवस्था को नहीं मानते। वे अपने अनुयायियों तथा शिष्यों आदि को अनेकानेक ऐसे उपाय बताते हैं जिससे उस व्यक्ति ने जीवन में भले ही कितने ही पाप क्यों न कियें हों, उन उपायों के करने से वह व्यक्ति उन पाप कर्मों के दण्डस्वरूप मिलने वाले फलों से बच जायेगा। उदाहरणस्वरूप जैसे कोई अपने अनुयायियों को इन पाप कर्मों के फलों से बचने के लिए कहता है कि यदि आपने जीवन में एक बार भी गंगा स्नान कर लिया तो आपके सारे पाप धुल जायेंगे, कोई कहता है कि एकादशी का केवल एक उपवास कर लो तो सारे पाप धुल जायेंगे, कोई चारधामों की यात्रा को पाप-मुक्ति का साधन बता रहा है, तो कोई बारह ज्योतिर्लिंगों के दर्शन कर लेने से पाप से मुक्ति मिल जायेगी ऐसा कहता है। इसी प्रकार हर गली चौराहे और नुक्कड़ पर स्वयं को विद्वान् या सन्त घोषित करके बैठा हुआ व्यक्ति ऐसे अनेक उपाय पाप कर्मों के फलों से मुक्ति के बता देता है। ऐसा नहीं है कि इस प्रकार की मिथ्या बातें सिर्फ हिन्दू सम्प्रदाय में ही बताई और पढ़ाई जा रही हैं। मुस्लिम, ईसाई आदि-आदि अन्य अनेकों सम्प्रदाय भी ऐसे हैं जहाँ पाप-कर्मों के दण्ड से बचने के लिए अनेक ऐसे ही उपाय लोगों को बताये जाते हैं। अब चूँकि ये उपाय अत्यन्त ही सरल होते हैं इसलिए लोग इन उपायों और इन उपायों को बतानेवाले उस तथाकथित विद्वान् या सन्त को अपने अनुकूल पाकर इन उपायों को सत्य मान लेते हैं तथा इन उपायों को बताने वाले व्यक्ति को अपना सच्चा सलाहकार, हितैषी या गुरु बना लेते हैं। इतना ही नहीं वे उसे ईश्वर का ही दूत या किसी-किसी को तो ईश्वर का ही अवतार मानकर उसकी पूजा आदि भी करते हैं तथा बहुत सारे धन-धान्य से उसे मालामाल कर देते हैं। यही कारण है कि वैदिक धर्म को छोड़कर अन्य जितने भी मत-पन्थ-सम्प्रदाय और उनके धार्मिक स्थल हैं वहाँ लोगों की सदा भीड़ लगी रहती है। इन्हीं झूठी तथा कर्मफल और ईश्वरीय न्याय-व्यवस्था के विरुद्ध बातों को सत्य मानकर पापकर्मों के दण्ड से बचने या अधिक सुख-प्राप्ति के लिए धन आदि के लालच या अन्य कई प्रकार के बहकावों में आकर बहुत से लोग अपना धर्म-परिवर्तन भी कर लेते हैं। इसके विपरीत यदि कोई सच्चा सन्त, विद्वान् या आप्त पुरुष अपने अनुयायियों या शिष्यों को यह बताता है कि वर्तमान या पूर्व जन्मों में किये हुए बुरे कर्मों का फल ईश्वर की न्यायव्यवस्था के अनुसार अवश्य ही मिलता है, उससे बचने का कोई उपाय नहीं है। पाप कर्म हों ही ना, ऐसा प्रयत्न सदा करो, यही इससे बचने का एकमात्र उपाय है, तो ऐसे सत्यवादी और धर्मात्मा पुरुषों से लोग दूरी बना लेते हैं। वास्तव में सच्चा सन्त वही होता है जो बिना किसी व्यक्तिगत लाभ, मान-अपमान का विचार किये सब सत्य-सत्य और धर्मयुक्त बातें सब लोगों को बताये, भले ही वह बातें सुनने वालों को कड़वी ही क्यों न लगें। सन्त कैसा होना चाहिए इसका एक बहुत ही उत्तम उदाहरण ऋषि दयानन्द सरस्वती

हो सकते हैं। जिन्होंने आजीवन केवल सत्य का आचरण किया और लोगों को सदा सत्य-सत्य और धर्माचरण से युक्त बातें ही बतायीं। उन्होंने कभी भी यह विचार नहीं किया कि जो सत्य-सत्य बातें वह लोगों को बता रहे हैं, उनसे कोई प्रसन्न होगा या रुष्ट होगा, सम्मान करेगा या अपमान करेगा। ऋषि दयानन्द को कई बार अपने विचार बदलने के लिए बहुत प्रकार के प्रलोभन भी दिये गये लेकिन हर बार उन्होंने उन प्रलोभनों को अस्वीकार कर दिया और सदा सत्य का ही आचरण किया।

कर्मफल के विषय में वैदिक धर्म की मान्यता बहुत ही तर्कपूर्ण और स्पष्ट है। जो जैसा कर्म करेगा उसे उसके ही अनुरूप फल मिलेगा। वह फल उपयुक्त समय आने पर इसी जन्म में या अगले जन्मों में, कभी भी भोगना पड़ सकता है। लेकिन यदि कोई कहे कि मात्र कुछ उपाय करके किये गये बुरे कर्मों के फल से बचा जा सकता है तो यह बात पूरी तरह असत्य और तर्करहित है। किसी तथाकथित सन्त या गुरु के कह देने मात्र से ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था नहीं बदलती, वह जैसी है वैसी ही रहेगी। उदाहरण के लिये जैसे वर्तमान में दुनियाभर के देशों में जो सरकारी तन्त्र कार्य करता है उनकी अपनी-अपनी न्याय-व्यवस्था है। जिसके अनुसार जो व्यक्ति जैसा अपराध करता है उसे उस देश की न्याय-व्यवस्था के अनुसार दण्ड दिया जाता है। जैसे भारत में यदि कोई व्यक्ति किसी की हत्या कर दे तो यहाँ की अदालती न्याय-व्यवस्था के अनुसार उस व्यक्ति को आजीवन कारावास या फाँसी की सजा दी जाती है। अब यदि हत्या करने वाला आरोपी पकड़े जाने के बाद अदालत में अपने बचाव में यह दलील दे कि उसे तो किसी ने बताया था कि हत्या करने के बाद यदि अदालत में क्षमा माँग ली जाये तो अदालत आरोपी को हत्या के आरोप से मुक्त कर देगी या आरोपी यह दलील दे कि उसे तो यह पता ही नहीं था कि हत्या करना अपराध है और उसके दण्डस्वरूप आजीवन कारावास या फाँसी की सजा होती है, इसलिए उसे मुक्त कर दिया जाये, तो क्या अदालत उस हत्या के अरोपी को मुक्त कर देगी? नहीं। ठीक उसी प्रकार ईश्वर की न्याय-व्यवस्था के अनुसार किये हुए कर्मों का फल अवश्य ही मिलता है, अच्छे कर्मों का अच्छा और बुरे कर्मों का बुरा। अब यदि कोई यह सोचे कि इन तथाकथित सन्तों या गुरुओं के बताये उपायों को करके मैं ईश्वर के दण्ड से बच जाऊँगा या ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था की सही जानकारी न होने के कारण ईश्वर मेरे अपराधों को क्षमा कर देगा तो यह उसी प्रकार सम्भव नहीं है जिस प्रकार वर्तमान की अदालती न्याय-व्यवस्था में ऐसी परिस्थिति होने पर अपराध क्षमा नहीं होता, दण्ड अवश्य ही मिलता है। यही न्यायसंगत भी है। आप कल्पना करें कि किसी व्यक्ति ने आपके घर चोरी कर ली। जो धन-सम्पत्ति आपने वर्षों परिश्रम करके इकट्ठा की थी वह सब चोर ले गया। उस धन का उपयोग आप भविष्य में पुत्र-पुत्रियों के विवाह तथा वृद्धावस्था में खर्च आदि के लिए करने वाले थे। आपके घर से चोरी की गयी धन-सम्पत्ति से उस चोर ने खूब आनन्द किया और अन्त में इन तथाकथित सन्तों और गुरुओं के बताये उपाय, गंगास्नान, एकादशीव्रत आदि कर लिये तथा ईश्वर ने उसका चोरी का अपराध क्षमा कर दिया और उसे कोई दण्ड नहीं दिया। ऐसा करके ईश्वर ने अच्छा किया या बुरा? आपका उत्तर यही होगा कि ईश्वर ने उस चोर को क्षमा करके बुरा किया, क्योंकि उस चोर के कारण आपको इतना कष्ट हुआ, आपकी धन-सम्पत्ति चली गयी और वह चोर मात्र कुछ छोटे उपाय करके दण्ड से मुक्त हो गया तथा आपके घर से चोरी की गई धन-सम्पत्ति से खूब आनन्द भी किया। ऐसा ही स्वयं के द्वारा किये गये पापकर्मों के विषय में भी सोचना चाहिए। हम जो भी पाप कर्म करते हैं उसका किसी ना किसी पर गलत प्रभाव पड़ता है, उससे किसी न किसी को कष्ट होता है। अब यदि ईश्वर हमारे उन पापों को क्षमा कर दे तो यह उन लोगों के साथ अन्याय होगा जिन्हें हमारे पापकर्मों की वजह से कष्ट हुआ। इसलिए ईश्वर ऐसा कभी नहीं करेगा, क्योंकि वह पक्षपातरहित और न्यायकारी है, वह पाप कर्मों का दण्ड अवश्य देगा।

अब यहाँ कुछ लोगों के मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि यदि ईश्वर हमारे पाप कर्मों को क्षमा नहीं करता तो हमें उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना क्यों करनी चाहिए? इस प्रश्न का ऋषि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने अमर

ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' के सातवें समुल्लास में बहुत ही सुन्दर उत्तर दिया है। ऋषि कहते हैं ''स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण, कर्म स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधरना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होता है।'' अर्थात् ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने से व्यक्ति सारे दुर्गुणों, दुर्व्यसनों से मुक्त हो जाता है, उसका अज्ञान नष्ट हो जाता है। उसे ईश्वर का साक्षात्कार हो जाता है जिसके कारण वह व्यक्ति भविष्य में स्वयं के द्वारा किये जानेवाले पाप कर्मों और उनके फलस्वरूप मिलने वाले दण्ड से बच जाता है।

जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है उसे उसके किये कर्म के अनुसार फल मिलता है। ऐसा सम्भव नहीं है कि कोई व्यक्ति बुरे कर्म करे और ईश्वर उसका दण्ड किसी और को दे दे या कोई व्यक्ति किसी और के पापस्वरूप मिलने वाले दण्ड को खुद भोग ले7 आज हमारे देश में ही नहीं विश्व के अनेक देशों में भी ईसाई मिशनरी संस्थाएँ बहुत बड़े स्तर पर लोगों का धर्मान्तरण कराने का कार्य कर रही हैं। लोगों को बहकाकर अपने सम्प्रदाय में जोड़ने के लिए वे लोगों से कहते हैं कि आपने अवश्य ही जाने-अनजाने अपने जीवन में बहुत से पापकर्म किये हैं इसलिए आपका जीवन इतना अशान्त और कष्टमय है। इस समस्या से बचने का एक ही उपाय है कि आप ईसामसीह की शरण में आ जाओ, वह आपके सारे पापों को क्षमा कर देगा। हम सब मनुष्यों ने बहुत से पाप किये हैं, इसलिए ईसामसीह ने हमारे द्वारा किये गये पापों के फलस्वरूप जो हमें दण्ड मिलनेवाला था वह उन्होंने सूली पर चढ़कर अपने ऊपर ले लिया। इसलिए जो भी व्यक्ति ईसामसीह की शरण में आयेगा उसके सारे पाप नष्ट हो जायेंगे। इस प्रकार की अनेक तर्कहीन और ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था के विरुद्ध बातें बताकर लोगों को बहकाया और उनका धर्मान्तरण किया जा रहा है। जो लोग इन बहकावों में आकर फँसते हैं। वे अपनी बुद्धि से यदि थोड़ा सा भी विचार करें तो यह बात सीधी समझ में आती है कि ऐसा होना सम्भव नहीं है, ईश्वर ऐसा कभी नहीं करेगा क्योंकि जैसा कि पहले बताया कि ईश्वर के एक व्यक्ति के पाप को क्षमा करने का अर्थ है कि उस पाप से जिस-जिस व्यक्ति को कष्ट हुआ उन सबके साथ अन्याय करना। इसी प्रकार किसी और के द्वारा किये गये पापकर्मों के फलस्वरूप मिलने वाले दण्ड को कोई और कभी नहीं भोग सकता, क्योंकि यह भी उस व्यक्ति के साथ अन्याय है जिसे उन पापकर्मों के कारण कष्ट हुआ। जैसे यदि कोई आपके साथ गलत आचरण करे और ईश्वर उसकी सजा उस व्यक्ति की जगह पर किसी और को दे दे तो यह आपको बिल्कुल न्यायपूर्ण नहीं लगेगा और जिसे बिना अपराध के ही दण्ड भोगना पड़ा, उसके लिये तो यह सीधे-सीधे अन्याय ही है।

आज समाज में चारों ओर जितनी भी अव्यवस्था, अधर्म और अपराध आदि की अधिकता है उसके पीछे मुख्य कारण यही है कि लोगों को ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था का सही-सही ज्ञान नहीं है। जिस भी व्यक्ति को ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था का ठीक-ठीक ज्ञान होगा वह छोटे से छोटे पापकर्म को भी करने से डरेगा, क्योंकि उसे पता है कि कोई भी उपाय करने से पापकर्मों के दण्ड स्वरूप मिलनेवाले फलों से बचा जाना सम्भव नहीं है। इसलिए यदि विश्व में शान्ति स्थापित करनी है तथा असत्य, अत्याचार, दुराचार, शोषण, छलकपट या अन्य अपराधों को समाप्त करना है तो सब मनुष्यों में ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था का ज्ञान होना अति आवश्यक है। वर्तमान में इस कार्य को कोई सम्भव कर सकता है तो वह सिर्फ वैदिकधर्म को जानने और माननेवाला व्यक्ति ही कर सकता है, क्योंकि संसार में बाकी जितने भी मत-पन्थ-सम्प्रदाय हैं वो सभी स्वयं घोर पाखण्ड और अज्ञानता में डूबे हुए हैं, उनके द्वारा यह कार्य होगा इसकी दूर-दूर तक सम्भावना नहीं दिखती। इसलिए आज पूरे देश और विश्व में फैली आर्यसमाजों पर यह एक बड़ी जिम्मेदारी है कि वह समाज को इस विषय में सही राह दिखाएँ, इससे न सिर्फ आर्यसमाज मजबूत होगा बल्कि वैदिकधर्म और उसमें निहित ज्ञान के प्रति लोगों में श्रद्धा भी बढ़ेगी तथा पुनः एक सुखी, समृद्ध और पापाचरण से मुक्त विश्व के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा।

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर।

अल्लाह का नया फरिश्ता सुभाषिनी सहगल अली को मनुस्मृति का मिथ्या इल्हाम

राजवीर आर्य (अग्निदग्ध)

दैनिक 'अमर उजाला', मुरादाबाद २९ नवम्बर २०१९ के अंक में माकपा (मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी) से सम्बद्ध सुभाषिनी सहगल का लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें लेखिका ने महर्षि मनु और मनुस्मृति पर अनर्गल प्रलाप किया है। आर्यसमाज के युवा विद्वान् श्री राजवीर आर्य ने उसका खण्डन करते हुए महर्षि मनु व मनुस्मृति से सम्बन्धित भ्रान्तियों का सप्रमाण निराकरण किया है। लेख के पश्चात् आर्यप्रतिनिधि सभा द्वारा लिखा गया एतद्विषयक विरोध पत्र भी दिया गया है। -सम्पादक

सुभाषिनी सहगल अली जी, आपने इल्हामी परम्परा का अनुकरण करते हुए २९/११/२०१९ के 'अमर उजाला' के सम्पादकीय पृष्ठ पर, पुनरुक्ति दोष से ग्रस्त (इल्हामी रोग जो ठहरा), पाँच सूरतों की एक आयत प्रकाशित करवायी है। सूरत का नाम मनुस्मृति और संविधान रखा है व इल्हामी परिपाटी का अनुकरण करते हुए जो भी आयतें आपने अवतरित की हैं वे विषय से असम्बद्ध हैं, क्योंकि मनुस्मृति और आज स्वीकृत संविधान दो भिन्न विषय है। कभी और इस पर चर्चा करेंगे। इस इल्हाम के तीन मुख्य बिन्दु आपने रखे हैं, यथा राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघ, डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित संविधान और (महर्षि) मनु।

सुभाषिनी सहगल अली जी! आपने केवल मनु अंकित किया है परन्तु हमने आर्य संस्कारवश महर्षि मनु अथवा राजर्षि मनु के सम्बोधन का उपयोग किया है।

अपनी सूरत के माध्यम से आप खुशखबरी देती हैं कि २६/११/१९४९ को देश का संविधान पारित हुआ था, इसलिए २६/११ संविधान दिवस कहलाता है। अपने हर्षमिश्रित उद्गारों से आप बताती हैं कि जितने उल्लास से इस वर्ष यह दिवस मनाया गया है वह पहले कभी नहीं हुआ। फरिश्ता जी! इस नवीन सुसमाचार के लिए समस्त आर्यजन आपके आभारी हैं, कृपया बाइबल में कब यह सुसमाचार क्षेपित होगा इसकी आपने कोई सूचना नहीं दी। खैर छोड़ें, इस सुसमाचार का हम आनन्द ले जीवन सफल बनाने का प्रयास करते हैं।

जैसे बाइबल में ईसामसीह, मैं भाई को भाई से लड़ाने आया हूँ, कहते हुए सुसमाचार के आनन्द से दूर रहने को चेतता है, ठीक उसी तरह आप चेताने के अन्दाज में कहती हैं कि शायद लोगों को अहसास होने लगा है के संविधान आज खतरे में हैं। किससे?

कुरान का अनुगमन करते हुए आप मुशरीक की उपाधि का उद्घाटन कर घोषणा करती हैं-

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से। इस उपाधि का हेतु आप आरएसएस का संविधान का आलोचक होना कहती हैं। अब इसका समाधान तो आरएसएस और आपके वामपंथी परिवार की नूरा कुश्ती से तय होगा, होगा भी या नहीं, कोई नहीं जानता?

१९८९ ईस्वी में कानपुर से मिली चुनाव जीत के अनुभव के आधार पर, आप ज्ञानवर्धन करने के हेतु समझाते हुए बताती हैं संविधान का खुलकर विरोध करना तो असंभव है, क्योंकि उसका पालन करने की शपथ सार्वजनिक पद पर आसीन हर व्यक्ति को लेनी पड़ती है।

आपके इस बाईबलरूपी सुसमाचार पर, हमारे आर्यमनस पर प्रश्न न अवतरित हो, ऐसा हो नहीं सकता, सो हम इन आयतों के प्रकाश में, ज्ञानवर्धन हेतु कुछ प्रश्न कर लेते हैं-

एक संविधान वो था जिसके लिए राज्यसभा में, १९/०३/१९५५ को, उपराज्यपाल के अधिकारों पर बोलते हुए महान् दार्शनिक, बाबा साहब अम्बेडकर के करकमलों से मनुस्मृति को अग्नि परीक्षा देनी पड़ी थी, ने कहा था-

My friends say that I wanted to burn the constitution. Well, in a hurry I did not explain that reason. Now that

my friend has given me opportunity, I think I shall give the reason.... People keep saying "Oh! You are the maker of the constitution." (But) I was a hack. What I was asked to do, I did much against my will.... I am prepared to say that I will be the first person to burn it out. I don't want it. It does not suit anybody."

१. एक संविधान वो था जिसमें आपके शपथ लेने के समय, यथा १९८९ तक ६१ संशोधन हो चुके थे।

२. या आज का संविधान, जिसमें आज दिनांक तक १०५ संशोधन हो चुके हैं।

आप इनमें से कौन से संविधान की बात कर रही हैं? अगर स्पष्ट कर देतीं, तो आशा थी कि हम आपकी आयत के महफूम से महरूम न रहते।

सूरत की आयतों में मुशरिक आरएसएस को उल्हाना देते-देते, आप प्रिय काफिरों के सिरमौर, राजर्षि मनु को कांटो का हार पहनना नहीं भूलीं। आपकी सूरत की तीन आयतों में महर्षि मनु के आदि मानवशास्त्र की व्याख्या अथवा कहें चीर-हरण का प्रयास विचारोत्तेजक है। बहाना मनुस्मृति में स्त्रियों व शुद्रों को जीने का अधिकार नहीं, प्रमाण में वो सारे श्लोक जिन पर आर्यमनीषी, डॉ. सुरेन्द्र कुमार ने आपने कालजयी ग्रन्थ विशुद्ध मनुस्मृति से सिद्ध किया है कि ये प्रक्षिप्त भाग हैं तथा राजऋषि मनु के मन्तव्यों के विरुद्ध हैं।

यदि, आपको आपत्ति न हो तो आपकी भाषा में और आधुनिक संविधान के परिप्रेक्ष्य में इन्हें संशोधन कहा जा सकता है. जो मनु के नाम पर मिलाये गये। .....हमारे मत में क्षेपक हैं।

आपके उद्धरणों से स्पष्ट है कि आपने केवल पूर्वरचित वामपंथी आयतों से टीपा है तथा आरएसएस के माध्यम से मानवशास्त्र के उद्गम, मानवमात्र के कुलगुरु, राजऋषि मनु को कलंकित करने का पुनः असफल प्रयास किया है।

फरिश्ता जी, ये वे ही मनु हैं जिनके नाम से आज भी मानवता सम्बोधन पाती है। जब अंग्रेजी में MAN, MANHOOD, HUMAN आदि का प्रयोग होता है तब राजऋषि मनु, जो मानव सभ्यता के प्रथम संविधान-कर्त्ता थे, उनके प्रति अपने सम्मान को ही प्रदर्शित करती है। महर्षि मनु, मानवता की उच्चकोटि की उन्नति के प्रेरक थे, यह बात आधुनिक काल में महर्षि दयानन्द ने आपने MAGNUM OPUS सत्यार्थप्रकाश में सम्यकरतया पुष्ट की है। जो प्रसंग आपने उपरोक्त वर्णित सूरत में मनुस्मृति के लिये हैं, उनके विपरीत राजऋषि मनु की वैदिक भावना अनुरूप निम्न श्लोक उपस्थित हैं-

- अध्याय ८ श्लोक ३३७-३३८ में महर्षि मनु कहते हैं कि चोरी आदि अपराध में शूद्र को यदि आठ गुणा दण्ड दिया जाता है तो वैश्य को सोलह गुणा, क्षत्रिय को बत्तीस गुणा, ब्राह्मण को चौंसठ अथवा सौ या एक सौ अट्ठाईस गुणा दण्ड करना चाहिये।

> राजर्षि मनु- जिस मानव का विद्या-जन्म न हुआ हो अर्थात जो विद्या पूर्ण न कर सका हो उसको शूद्र कहते हैं। जैसे आपके पोलित ब्यौरों में कम पढ़े-लिखे कर्मचारीगण काम करते मिलते हैं।

> महर्षि मनु शूद्र वर्ण को सामान्य उद्बोधनों से युक्त कर अन्य वर्णों को, जिनकी विद्या पूर्ण हो चुकी है, निर्देश करते हैं कि अपने भृत्यों को पहले भोजन कराये तदनन्तर स्वयं भोजन करे। महर्षि मनु, आदेश करते हैं कि शूद्र अतिथि के आने पर पहले उसे भोजन दें।(९. ३३४, ३३५)

> महर्षि मनु वृद्ध शूद्र को सभी वर्णों से पूर्व सम्मान की बात करते हैं (२.१३७) तथा वर्ण-व्यवस्था कर्म आधारित मानते हैं, जिसमें व्यक्ति कर्मानुसार, योग्यतानुसार वर्ण को धारण करता है न कि जन्म के आधार पर। वर्ण-परिवर्तन यहाँ गुण कर्मानुसार सम्भव है व ब्राह्मण शूद्र तथा शूद्र ब्राह्मण बन जाता है। यही व्यवस्था आज भी सभी संस्थानों की कार्यप्रणाली में परिलक्षित होती है।

> राजर्षि मनु (९.१३०) पुत्र-पुत्री को समान, आत्मरूप और पैतृक संपति के अधिकार की बात करते हुए दोनों को दायभाग में समान मानते हैं किन्तु मातृधन पर केवल कन्याओं का अधिकार घोषित करते हैं।

> महर्षि मनु स्त्रियों के धन पर बलात् अधिकार

करनेवाले को चोर सदृश दण्ड की व्यवस्था कर (९. २१२, २१३, ३. ५२-८२, ८.२९) स्त्रियों के प्रति अपराध करनेवालों को मृत्युदण्ड तक का विधान करते हैं (८.३२३, ९.२३२, ८.३५२)। पितृतुल्य वात्सल्यता का भाव रखते हुए पुरुषों को सावधान कर माता, पत्नी और पत्नी से विवाद न करने को कहते हैं (४.१८०) तथा मिथ्या दोषारोपण करनेवाले, निर्दोष होने पर भी त्यागने वाले, वैवाहिक दायित्वों का निर्वाह न करनेवालों को दण्डित करने का विधान करते हैं (८.२७५, ३८९, ९.४)

> महर्षि मनु ने जिन सुन्दर विशेषणों से नारी का सम्मान किया है वो अतुलनीय हैं। राज-ऋषि मनु नारी को घर का भाग्योदय करने वाली, घर की ज्योति, घर की शोभा, संसार यात्रा के आधार से अलंकृत करते हैं तथा उच्च स्वर में घोषणा करते हुए नारी के सम्मान को देववास के तुल्य कहकर चेतावनी देते हैं कि जहाँ स्त्रियों का तिरस्कार होता है वहाँ सब कर्म निष्फल हो जाते हैं (३.५६)

उक्त स्त्री सम्मानपरक श्लोकों के विरुद्ध जो श्लोक मनुस्मृति में मिलते हैं वे प्रक्षिप्त हैं। आपने अपने लेख में प्रक्षिप्तों को उद्धृत किया है। मौलिक श्लोकों को नजरअन्दाज कर दिया। मेरा आपसे अनुरोध है कि बाइबल और कुरान के निम्न प्रसंगों पर भी आप लेख लिखकर अपनी राय दें। यदि आप इन विषयों पर प्रकाश नहीं डालेंगीं तो आपका लेख पक्षपातपूर्ण कहा जायेगा।

> जब लूत की पुत्रियाँ वंश-वृद्धि के लिये अपने पिता से सहयोग कर रही थीं।

> जब इब्राहिम अपनी दासी से नियोगज पुत्र उत्पन्न कर रहा था।

> जब इज़राइली राजपरिवारों के लोग अपने भाइयों की पत्नियों, बहनों से बलात् व्यभिचार कर रहे थे।

> जब इस्लाम के प्रवर्तक मोहम्मद, बनी इज़राइल की नस्लों को जिब्हा कर गड्डों को पाटकर उनकी स्त्रियों को अपने हवस की शोभा का कुरानीय आदेश सिद्ध कर रहे थे।

> जब उमर फारूक के निवेदन पर इस्लाम में स्त्रियों के लिए हिजाब का फरमान लागू किया था।

> जब कुरान ने स्त्रियों की गवाही पुरुष से आधी मानी थी।

> जब मोहम्मद के जीवित रहते अली दूसरा निकाह करना चाहते थे, किन्तु मोहम्मद ने जुम्मे की नमाज़ के बाद खुत्बा पढ़कर अली के अरमानों पर पानी फेर दिया था।

ऐसे अनेक अवसर हैं जहाँ पर हमारी मति से मनुस्मृति में संशोधन (प्रक्षेपण) हुए होंगे। यदि आप फरिश्तों का अन्य मत है, तो नयी आयतों से अवगत करवाना न भूलना, हम आपके ऋणी रहेंगे।

एक और बात पूछनी भूल गया, बाइबिल, कुरान, कुरान की तफ्सीरे, सही हदीसें स्त्रियों के वैयक्तिक सम्पत्ति के अधिकारों पर क्या कहती हैं?... इल्हामी नज़रियात की रोशनी में जरूर समझा देना।

हमें एक शंका हुई, समाधान अवश्य करना। क्या आपने अली उपनाम, हज़रत अली की उस तौहीन के बरकस रखा है जब अली की १८००० आयतों वाली कुरान अबू बकर और उमर फारुक ने फिंकवा दी थी?

...सच का पल्लू पकड़कर उत्तर देना, आज जो कुरान मिलती है उसमें ६६६६ आयतें हैं।

वैसे मनुस्मृति में हलाला का संशोधनगत प्रवेश अभी तक नहीं हुआ है, यदि संभव हो तो अपने इलहमे दीन(वामपन्थ) के कार्यालय से वो फतवा भी दिलवा दें।

शिविर का आयोजन

जिला आर्य प्रतिनिधि सभा, फर्रुखाबाद, उ.प्र. द्वारा १५ जनवरी से ०२ फरवरी २०२० तक वैदिक धर्म प्रचार हेतु ७वें चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन सभा प्रधान आचार्य चन्द्रदेव शास्त्री के सान्निध्य में किया जा रहा है, जिसमें आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वान्, भजनोपदेशकों, संन्यासियों द्वारा वेद प्रचार किया जायेगा। शिविर के अन्तर्गत प्रतिदिन यज्ञ तथा योग शिविर का आयोजन किया जायेगा, साथ ही षट् दर्शन समन्वय शिविर का आयोजन किया जायेगा। इस अवसर पर वेद, संस्कृत, गौ, गंगा, गायत्री, राष्ट्र रक्षा तथा नारी सशक्तिकरण आदि विषयों पर विविध सम्मेलनों का आयोजन भी किया जायेगा। दि. ३० जनवरी २०२० (बसन्त पंचमी) पर विशाल शोभायात्रा तथा दि. ०२ फरवरी २०२० को विराट कवि सम्मेलन का आयोजन भी किया जायेगा।

श्रीमान् सम्पादक महोदय
दैनिक अमर उजाला, मुरादाबाद।
विषय- मनुस्मृति की आलोचना निराधार, अज्ञानपूर्ण और पूर्वाग्रहग्रस्त।

आपके दैनिक समाचार पत्र 'अमर उजाला' (२९-११-२०१९) में प्रकाशित 'मनुस्मृति और संविधान' शीर्षक लेख जहाँ निराधार, अज्ञानतापूर्ण, भ्रामक और पूर्वाग्रहग्रस्त है, वहाँ बहुसंख्यक समाज की भावनाओं, अस्थाओं को आहत करनेवाला है। भारत के प्राचीन शास्त्रों पर किसी शास्त्र-विशेषज्ञ से लेखन कराना चाहिये, ऐसे राजनेताओं से नहीं जिनका उस शास्त्र के बारे में कोई अध्ययन ही नहीं है और जिनका मकसद मात्र विरोध तथा निहित स्वार्थों की राजनीति करना है।

लेखिका सुभाषिनी अली सहगल माकपा से सम्बद्ध वामपन्थी विचारधारा की हैं। वामपन्थियों का लक्ष्य ही रहता है कि प्राचीन भारतीय संस्कृति का विरोध और विकृतीकरण करना। इनका लेख तथ्याधारित न होने के कारण भ्रामक और मिथ्या कथनों पर आधारित है। राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर में महर्षि मनु की मूर्ति की स्थापना एक स्वतन्त्र न्यायिक संगठन ने की थी और उस समय केन्द्र तथा राजस्थान में कांग्रेस सरकार थी। यह पाठकों के समक्ष झूठ परोसा गया है कि भाजपा की सरकार थी। मनुस्मृति की आड़ में भाजपा पर निशाना साधना शास्त्र के साथ अन्याय है और उसका राजनीतिकरण है। यह लेखकीय ईमानदारी नहीं है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी द्वारा निर्धारित संविधान में सत्तर वर्षों में एक-सौ से अधिक परिवर्धन हो चुके हैं। इसी प्रकार व्यवस्था और परिस्थितियाँ बदलने पर मनुस्मृति में समय-समय पर परिवर्तन, परिवर्धन और मिलावटें हुई हैं जो सआशय मूल श्लोकों में मिला दी गईं हैं। आलोचक मनुस्मृति में विद्यमान मूल श्लोकों को उद्धृत नहीं करते अपितु केवल मिलावटी श्लोकों को उद्धृत कर एकपक्षीय आलोचना करते हैं। वे इस बात का उत्तर भी नहीं देते कि एक ही ग्रन्थ में परस्पर दो विरोधी विचारधारा के श्लोक क्यों हैं और उनमें किसको मूल मानोगे?

महर्षि मनु भारत के गौरव हैं। वह आदि-संविधान प्रदाता हैं। स्त्रियों के सम्मानप्रदाता हैं। स्त्रियों के समान अधिकारों का विधान करते हैं। मनुस्मृति में लिखा है कि स्त्रियाँ घर की लक्ष्मी और शोभा होती हैं (९.२५) जिस परिवार में नारियों का सम्मान नहीं होता वह गृहस्थ निष्फल हो जाता है (५.५६)। पुत्र के समान पुत्री भी माता-पिता की आत्मरूप है। अतः उसको दायभाग में समान अधिकार है (९.१३०)। गृहस्थ में पति-पत्नी का परस्पर व्यवहार एक-दूसरे को सन्तुष्ट करने वाला होना चाहिये। यह उनका कर्त्तव्य है। (३.६०)। सदा यह प्रयास होना चाहिये कि विवाह के बाद तलाक न हो (९.१०१-१०२)। भले ही कोई स्त्री अविवाहित रह जाये किन्तु गुणहीन, दुर्जन पुरुष से विवाह न करें (९.८९)। महिलाओं को धार्मिक अनुष्ठान कराने का अधिकार है (९.११,२८,९६)। आदि। ऐसे ही शूद्रों के प्रति सम्मान है।

ऐसे अनेक सम्मानजनक विधान हैं। आलोचक पूर्वाग्रहों के कारण मिलावटी श्लोक प्रस्तुत करके पाठकों को भ्रमित करते हैं।

आपके प्रसिद्ध समाचार-पत्र में पाठकों को भ्रमित करनेवाले अथवा एकपक्षीय लेखों का प्रकाश करके आपको अपनी छवि धूमिल नहीं करनी चाहिये। मौलिक और मिलावटी श्लोकों की जानकारी देनेवाला डॉ. सुरेन्द्र कुमार कृत शोध 'विशुद्ध मनुस्मृति' सर्व उपलब्ध है। पाठक उसके अध्ययन से मनुस्मृति के यथार्थ स्वरूप को जान सकते हैं। आशा है आप मनुस्मृति विषयक भ्रान्ति का निराकरण करेंगे और पुनः अपने समाचार-पत्र में ऐसे लेखों को स्थान नहीं देंगे जो मूल ग्रन्थ के विपरीत हो।

रमेश सिंह आर्य, आर्यप्रतिनिधि सभा लखनऊ।

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का नि:शुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।

गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की नि:शुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।

दूरभाष- ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० नवम्बर २०१९ तक)

१. श्री माणकचन्द जैन, छोटी खाटु २. श्री डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ३. श्री सतीश कुमार, मुजफ्फरनगर ४. श्री चन्द्रसेन हरिसिंघानी, अहमदाबाद ४. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ५. श्री आदर्श आर्य, नई दिल्ली।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१६ से ३० नवम्बर २०१९ तक)

१. श्री हरसहायसिंह आर्य, बरेली २. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ३. श्री माणकचन्द जैन, छोटी खाटु ४. श्री पंकज दीवान, दिल्ली ५. श्री शान्तिस्वरूप गोयल, लुधियाना ६. श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ७. श्रीमती भँवरी देवी, राजगढ़ ८. श्री अजय गर्ग, पानीपत।

एक आहुति अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें। **कन्हैयालाल आर्य - मन्त्री**

भूल-सुधार

परोपकारी, नवम्बर (द्वितीय) २०१९ पृष्ठ संख्या १६ पर दानदाता क्रमांक २० पर वेदप्रचार मण्डल पानीपत छपा है। कृपया इसे 'वेदप्रचार मण्डल सोनीपत' पढ़ा जाए।

वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य

१. महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ

पृष्ठ : २१६ **मूल्य :** १५०

यह पुस्तक महर्षि के सभी शास्त्रार्थों का संग्रह है। यद्यपि सभा यह संग्रह दयानन्द ग्रन्थमाला में भी प्रकाशित कर चुकी है, पुनरपि पाठकों की सुविधा के लिए इसे पृथक पुस्तक रूप में भी प्रकाशित किया गया है।

२. महर्षि दयानन्द की आत्मकथा

पृष्ठ : ८० **मूल्य :** ३०

महर्षि दयानन्द ने अलग-अलग समय व अवसरों पर अपने जीवन सम्बन्धी विवरण का व्याख्यान किया है। जिनमें थियोसोफिकल सोसाइटी को लिखा गया विवरण, भिड़े के बाड़े में दिया गया व्याख्यान एवं हस्तलिखित विवरण आदि हैं। इन सभी विवरणों को ऋषि के हस्तलिखित मूल दस्तावेजों सहित सभा ने एकत्र संकलित किया है।

३. काल की कसौटी पर

पृष्ठ : ३०४ **मूल्य :** २००

यह पुस्तक डॉ. धर्मवीर जी द्वारा लिखित सम्पादकीय लेखों का संकलन है। विषय की दृष्टि से इस पुस्तक में उन सम्पादकीयों का संकलन किया गया है, जिनमें धर्मवीर जी ने आर्यसमाज के संगठन को मजबूत करने एवं ऋषि के स्वप्नों के साथ-साथ उन्हें पूरा करने का मन्त्र दिया है।

४. कहाँ गए वो लोग

पृष्ठ : २८८ **मूल्य :** १५०

आर्यसमाज या आर्यसमाज के सांगठनिक ढांचे से बहार का कोई भी ऐसा व्यक्ति जो समाज के लिए प्रेरक हो सकता है, उन सबके जीवन और ग्रहणीय गुणों पर धर्मवीर जी ने खुलकर लिखा है। उन सब लेखों को इस पुस्तक के रूप में संकलित किया गया है।

५. एक स्वनिर्मित जीवन - मास्टर आत्माराम अमृतसरी

पृष्ठ : १७४ **मूल्य :** १००

आर्यसमाज के आरम्भिक नेताओं की सूची में मास्टर आत्माराम अमृतसरी का नाम प्रमुख रूप से आता है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु द्वारा लिखी अमृतसरी जी की यह जीवनी पाठकों को आर्यसमाज के स्वर्णयुग से परिचित कराएगी।

लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटायी नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। **-संपादक**